ओ३म्

ऋग्वेद यजुर्वेद

पवमान

(मासिक)

मूल्य: ₹ 15

वर्ष : 27 माघ-फाल्गुन वि॰स॰ 2071 फरवरी 2015 अंक : 2

मुद्रक: सरस्वती प्रेस, देहरादून वजन: 50 ग्राम

ऋषि बोधांक

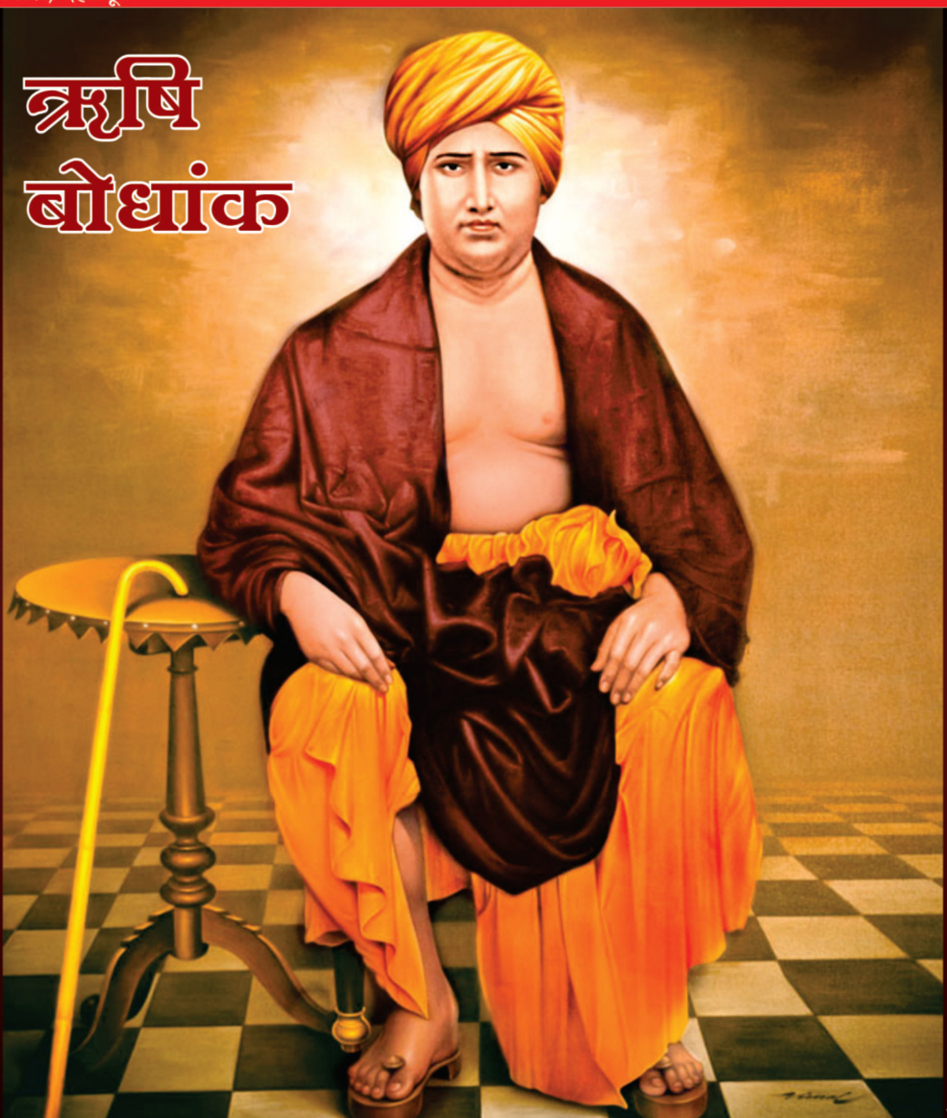

सामवेद अथर्ववेद

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी, तपोवन के प्रबंधन समिति के सदस्य

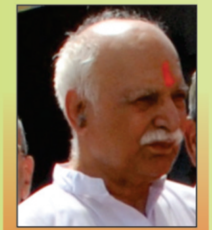

रामभज मदान

नाम	:	रामभज मदान
जन्म	:	1 मई, 1936
स्थान	:	विराड़ी (अब पाकिस्तान में है)
शिक्षा	:	बी.ए. (ऑनर्स) पंजाब यूनिवर्सिटी 1957
		एल.एल.बी. दिल्ली यूनिवर्सिटी 1960
		डी.पी.एम. दिल्ली यूनिवर्सिटी 1971
अवकाश प्राप्त	:	विश्व स्वास्थ्य संगठन, भारत सरकार से वर्ष 1996 में सेवानिवृत्त
सामाजिक कार्य	:	1. मुख्यत: आर्य समाज से सम्बद्ध
		2. आर.एस.एस. से भी संस्कार प्राप्त हुए
पता	:	126, राजा गार्डन, नई दिल्ली-110015
सम्पर्क सूत्र	:	मो. : 09311175775

महेन्द्रपाल सिंह चौहान

नाम	:	महेन्द्रपाल सिंह चौहान
जन्म	:	1 जनवरी, 1943
स्थान	:	हल्दौर, (बिजनौर), उत्तर प्रदेश
शिक्षा	:	स्नातक (संस्कृत)
		स्नातकोत्तर (अर्थशास्त्र)
अवकाश प्राप्त	:	प्राविधिक सहायक कृषि विभाग से वर्ष 2000 में सेवानिवृत्त
सामाजिक कार्य	:	1. आर्य समाज नत्थनपुर के पूर्व अध्यक्ष
		2. आर्य समाज रायपुर के मंत्री
		3. राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के दयानन्द नगर के बौद्धिक प्रमुख
		4. मंत्री, सेवा भारती, महानगर देहरादून
पता	:	ए-92 सी, एमडीडीए कॉलोनी, डालनवाला, चन्दर रोड, देहरादून
सम्पर्क सूत्र	:	मो. : 9719362181

प्रेम प्रकाश शर्मा

नाम	:	प्रेम प्रकाश शर्मा
जन्म	:	1 जनवरी 1950
स्थान	:	मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)
शिक्षा	:	बी.ई., रूड़की विश्वविद्यालय
		चेन्नई से बिजनेस मैंनेजमेंट में डिप्लोमा
अवकाश प्राप्त	:	उत्तराखण्ड पॉवर कॉरपोरेशन लिमिटेड, देहरादून से मुख्य अभियन्ता के पद से सन् 2009 में सेवानिवृत्त।
सामाजिक कार्य	:	1. पूर्व अध्यक्ष, उत्तराखण्ड इंजीनियर्स एसोसिएशन
		2. सचिव, वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, देहरादून
		3. प्रधान, आर्य उप प्रतिनिधि सभा, देहरादून
पता	:	22, दून विहार, राजपुर रोड, जाखन, देहरादून
सम्पर्क सूत्र	:	मो. : 9412051586

ओ3म्

पवमान

वर्ष–27 अंक–2

माघ–फाल्गुन 2071 वि० फरवरी 2015

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,115 दयानन्दाब्द : 190

★

–: संरक्षक :–

स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती

★

–: अध्यक्ष :–

श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री

मो. : 09810033799

★

–: सचिव :–

प्रेम प्रकाश शर्मा

मो. : 9412051586

★

–: आद्य सम्पादक :–

स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

–: मुख्य सम्पादक :–

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

अवैतनिक

मो. : 08755696028

★

–: सम्पादक मण्डल :–

अवैतनिक

आचार्य आशीष दर्शनाचार्य

मनमोहन कुमार आर्य

★

–: कार्यालय :–

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,

तपोवन मार्ग, देहरादून–248008

दूरभाष : 0135–2787001

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com

Web-www.vaidicsadhanashramdehradun

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती	3
सत्यान्वेषी महर्षि दयानन्द....	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	4
ईश्वर–जीवात्मा विषयक....	मनमोहन कुमार आर्य	8
दक्षिणा का रहस्य	महात्मा प्रभु आश्रित महाराज	11
और कोई नहीं मिलता	पं. शिवशर्मा उपदेशक	13
सत्यग्राही साधक (चिकित्सक)	डॉ. सुधीर कुमार आर्य	14
प्रभु अच्छा ही करता है	स्व. धर्ममुनि परिव्राजक	15
महर्षि दयानन्द सरस्वती....	पं. उम्मेद सिंह विशारद	16
ऋषि का बोधोत्सव कैसे....	अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द	18
दीर्घायु बनाम वृद्धावस्था	देवराज आर्यमित्र, नई दिल्ली	20
मोक्ष और ब्रह्मऋषि दयानन्द	अभिमन्यु कुमार खुल्लर	21
प्रकृतिकजन्य उत्पादों से....	श्री महेन्द्र कुमार मेहता	23
आर्यसमाज और राष्ट्रीय पर्व	नरसिंह सोलंकी	24
हम ज्ञान प्राप्त करते हुए सौ..	डॉ. प्रशस्यमित्र शास्त्री	25
ऋषि दयानन्द का विद्याध्ययन	डा. भवानीलाल भारतीय	27
महर्षि दयानन्द द्वारा	ओम प्रकाश आर्य, राजस्थान	29
परमपूज्य महर्षि दयानन्द...	सुन्दरलाल प्रह्लाद चौधरी	31
सत्यार्थ प्रकाश एवं वैदिक संध्या प्रशिक्षण शिविर		32
फुट नोट्स	महर्षि दयानन्द सरस्वती वचनामृत	

पत्रिका का शुल्क : वार्षिक रु 150 : एक प्रति मूल्य : रु 15 : पन्द्रह वर्ष हेतु : रु 1500
पवमान पत्रिका का शुल्क / दानराशि कैनरा बैंक, क्लाक टावर, देहरादून (IFSC code : CNFB0002162) के खाता 'वैदिक साधन आश्रम' खाता सं. 2162101021169 में जमा करा सकते हैं।

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

सम्पादकीय

महर्षि दयानन्द सरस्वती

स्वतन्त्रता स्वराष्ट्र व स्वभाषा के प्रबल पक्षधर महर्षि दयानन्द सरस्वती का सम्पूर्ण जीवन व कृतित्व आध्यात्मिकता और राष्ट्रीयता से परिपूर्ण था। राष्ट्रप्रेम उनके लिए सर्वोपरि था। उनका विचार था कि पराधीन व्यक्ति समाज और राष्ट्र के लिए अधोगति का कारण बनता है। सन् 1874 में ऋषि ने 'आर्याभिविनय' नामक एक ग्रन्थ की रचना की जिसमें लिखा गया था, ''अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी शासन न करे। हम कभी अधीन न हों।'' इससे प्रमाणित होता है कि महर्षि दयानन्द भारतीय स्वातन्त्र्य की कल्पना करने वाले पहले व्यक्ति थे। उनसे प्रभावित होकर अनेक युवा स्वातन्त्र्य संग्राम में कूद पड़े थे और इनमें से कई ने इस संग्राम में अपने प्राणों की आहुति दी थी।

राष्ट्रोन्नति के लिए वे पांच 'स्वकार' अनिवार्य मानते थे। 1– महर्षि की स्वसाहित्य में अटूट आस्था थी। वे वैदिक वाङ्मय के अंगभूत ग्रंथों को ही साहित्य का मूलाधार मानते थे। 2–संस्कृति शब्द का बहुत व्यापक अर्थ है। संस्कृति मानव के सम्पूर्ण व्यवहार की परिचायक होती है। इसमें हमारी जीवन चर्या और विचार पद्धति में कला, साहित्य, भाषा, धर्म, मनोरंजन और विश्वास आदि प्रतिबिम्बित होते हैं। 3–दयानन्द पहले भारतीय विचारक थे जिन्होंने यह अनुभव किया कि भारत को एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता है। 4–महर्षि दयानन्द की स्वधर्म पर अटूट श्रद्धा थी। उनके अनुसार भारत का प्राचीनतम धर्म वैदक धर्म है। यह पूर्णरूप से आस्तिक भाव लिए हुए एकश्वरवादी है। वैदिक धर्म के अनुसार परमेश्वर किसी मठ मन्दिर गिरजाघर या गुरद्वारे में बन्द नहीं है, अपितु वह सर्वत्र विद्यमान है। यह मानवतावादी धर्म है। 5–स्वदेश प्रेम और स्वदेशाभिमान के बिना हम अपनी अस्मिता की रक्षा नहीं कर सकते हैं।

महर्षि दयानन्द एक महान् योगी और चिन्तक थे। उनका शैक्षिक चिन्तन ज्ञान, विज्ञान और तत्त्व दर्शन से परिपूर्ण है। उनका कहना था कि संस्कार संस्कृति पर आधारित हों तभी बच्चों का बुद्धि विवेक जागरित होगा और उनमें राष्ट्रीयता और सामाजिकता की प्रबल भावना का उदय होगा। उनके द्वारा वेद, वेदांग और भारतीय दर्शन के पठन–पाठन पर बल दिया गया था। उन्होंने भ्रम, अंधविश्वास और कुरीतियों को दूर करने का सदैव प्रयास किया और 'सत्यार्थ प्रकाश' जैसा कालजयी ग्रन्थ लिखकर अनेक भ्रान्तियों और रूढ़ियों को दूर किया जिनमें स्त्री शिक्षा का प्रचार–प्रसार और बाल–विवाह का घोर विरोध करना प्रमुख था। उनकी दृष्टि में धर्म वह है जिसका कोई विरोध न हो सके। जो सत्य है उसका मानना–मनवाना और जो असत्य है उसका छोड़ना उन्हें अभीष्ट था। उन्होने सत्य की खोज के लिए घर ही नहीं छोड़ा अपितु संसार का सुख भी त्याग दिया था। मानव समाज में वीरता, उच्च संस्कार व सर्वधर्म समभाव में वृद्धि उनके जीवन के मुख्य लक्ष्य थे। मृत्यु को भी उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर यह कहते हुए, ''ईश्वर तेरी यही इच्छा है, तेरी इच्छा पूर्ण हो'' प्राण त्याग दिये थे। शिवरात्रि आत्मज्ञान का पर्व है। यह बोधोत्सव हमें जगाकर कर्तव्यबोध करने के लिए प्रेरित करता है। हम ऋषि के जीवन से प्रेरणा लें। महर्षि को शत–शत नमन करते हुए यह बोधांक समर्पित है।

– कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

वेदामृत

वेदाध्ययन का फल

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

पावमानीयों अध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम्।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम्।।

(ऋ0 9 । 67 । 32; सा0 1199)

शब्दार्थ— (यः) जो व्यक्ति, उपासक (ऋषिभिः) ऋषियों द्वारा (सम्, भृतम्) धारण की गई (पावमानीः) अन्तःकरण को पवित्र करने वाली (रसम्) वेद की ज्ञानमयी ऋचाओं का (अध्येति) अध्ययन करता है (सरस्वती) वेदवाणी (तस्मै) उस मनुष्य के लिए (क्षीरम्) दूध, (सर्पिः) घी (मधु उदकम्) मधुर जल, शरबत आदि (दुहे) प्रदान करती है।

भावार्थ— वेदाध्ययन से क्या मिलता है? मन्त्र में वेदाध्ययन से मिलने वाले फलों का सुन्दर वर्णन है।

वेद के अध्ययन और उसके अनुसार आचरण करने से मनुष्य के जीवन–निर्वाह के लिए सभी उपयोगी वस्तुओं की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति वेद का स्वाध्याय करते हैं उन्हें दूध और घी आदि शरीर के पोषक तत्वों की कमी नहीं रहती। वैदिक विद्वान् जहां जाते हैं वहीं घी, दुग्ध और शर्बत आदि से उनका स्वागत और सत्कार होता है।

जीवन की आवश्यकताओं की प्राप्ति के लिए प्रत्येक व्यक्ति को वेद का अध्ययन करना चाहिए।

सत्यान्वेषी महर्षि दयानन्द सरस्वती

–कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

महर्षि दयानन्द के जीवन में सत्य का सर्वोपरि स्थान था क्योंकि वे सत्य की खोज में ही अपना घर छोड़कर निकले थे और जीवन पर्यन्त सत्य के साधक, शोधक और उपासक बने रहे। महर्षि के अनुसार जैसा कुछ अपने आत्मा में है और असम्भवादि दोषों से रहित करके सदा वैसा ही बोलें, उसको 'सत्यभाषण' कहते हैं। सत्पुरुष की परिभाषा करते हुए महर्षि कहते हैं कि जो सत्य प्रिय धर्मात्मा विद्वान् सब के हितकारी और महाशय होते हैं, वे 'सत्पुरुष' कहलाते हैं। सत्पुरुषों को योग्य है कि सामने दूसरे का दोष कहना और अपना दोष सुनना, परोक्ष में दूसरे के सदा गुण कहना और दुष्टों की यह रीति है कि सम्मुख में गुण कहना और परोक्ष में दोषों का प्रकाश करना। जब तक मनुष्य दूसरे से अपने दोष नहीं कहता तब तक मनुष्य दोषों से छूटकर गुणी नहीं हो सकता है। कभी किसी की निन्दा न करे, जैसे–'गुणेषु दोषारोपणमसूया' अर्थात् .महर्षि ने सत्याऽसत्य की पांच प्रकार से परीक्षा करना बताया है– एक–जो ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और वेदों से अनुकूल हों, वह सत्य और उससे विरुद्ध असत्य है। दूसरा–जो, जो सृष्टिक्रम से अनुकूल वह सत्य और जो सृष्टिक्रम के विरुद्ध है, वह–वह असत्य है। तीसरा–'आप्त' अर्थात् जो धार्मिक विद्वान्, सत्यवादी, निष्कपटियों के संग उपदेश के अनुकूल हैं, वह–वह ग्राह्य और जो–जो विरुद्ध वह अग्राह्य है। चौथा–अपने आत्मा की पवित्रता विद्या के अनुकूल अर्थात् जैसा अपने को सुख प्रिय और दुःख अप्रिय है, वैसे ही सर्वत्र समझ लेना कि मैं किसी को दुख वा सुख दूंगा, तो वह भी अप्रसन्न और प्रसन्न होगा और पांचवां–आठों प्रमाण अर्थात् प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, सम्भव और अभाव। वे जीवन में सदा सत्य का ही प्रयोग करते थे इसीलिए पढाते हुए विरजानन्द उन्हें 'कालजिह्व' और 'कुलक्कर' कहा करते थे। ये उनके प्यार के नाम थे। 'कालजिह्व' का अर्थ है जिसकी जिह्वा असत्य के खण्डन और भ्रान्तिजाल के छेदन में काल के .समान कार्य करे। कुलक्कर का अर्थ है खूँटा अर्थात् जो खूँटे समान दृढ़ और अविचल रहकर विपक्षी को पराभूत कर सके।

महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ का प्रणयन भी सत्य का प्रकाश करने के उद्देश्य से किया था। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ की भूमिका में लिखा है–" मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य–सत्य अर्थ का प्रकाश करना है अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना, सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाय। किन्तु जो पदार्थ जैसा है, उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहाता है। जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मत वाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है, इसलिए वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता। इसीलिए विद्वान् आप्तों का मुख्य

मैं अपना मन्तव्य उसी को मानता हूँ जो कि तीन काल में सबको एक सा मानने योग्य है।
मेरा कोई नवीन कल्पना या मत–मतानतर चलाने का लेश मात्र भी अभिप्राय नहीं है। किन्तु
जो सत्य है उसको मानना, मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना और छुड़वाना मुझ को अभीष्ट है।

काम है कि उपदेश वा लेख के द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात् वे स्वयं अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें। मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य को जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है। परन्तु इस ग्रन्थ में ऐसी कोई बात नहीं रक्खी है और न किसी का मन दुखाना वा किसी को हानि पर तात्पर्य है। किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्यासत्य को मनुष्य लोग जान कर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें। क्योंकि सत्योपदेश के विना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।''

महर्षि की दृष्टि में सत्यार्थ प्रकाशन सर्वोच्च था। भ्रान्ति निवारण पुस्तक में वे कहते हैं–'' जो मैं निरानिरी संसार का ही भय करता और सर्वज्ञ परमात्मा का कुछ भी नहीं, कि जिसके अधीन मनुष्य के जीवन–मृत्यु और सुख–दु:ख हैं, तो मैं ऐसे ही अनर्थक वाद–विवादों में मन देता। परन्तु क्या करूँ मैं तो अपना तन–मन–धन सब सत्य के प्रकाशार्थ समर्पण कर चुका। मुझ से खुशामद करके अब स्वार्थ का व्यवहार नहीं चल सकता, किन्तु संसार को लाभ पहुंचाना ही मुझ को चक्रवर्ती राज्य के तुल्य है।

बरेली में महर्षि द्वारा किये गये खण्डन से कमिश्नर और कलैक्टर रुष्ट थे। उस समय महर्षि लाला लक्ष्मीनारायण के पास ठहरे हुए थे। अधिकारियों ने लालाजी से कहा कि वे महर्षि को रोकें। यह बात कांपते–कांपते महर्षि तक पहँचाई गई। उस दिन के व्याख्यान में भी सब सरकारी हाकिम आए हुए थे। महर्षि ने सत्य का महत्त्व वर्णित करते हुए कहा था–'' लोग कहते हैं सत्य को प्रकट न करो, कलक्टर क्रुद्ध होगा, कमिश्नर अप्रसन्न होगा, गवर्नर पीड़ा देगा। अरे चक्रवर्ती राजा क्यों न हो, हम तो सत्य ही कहेंगे।'' इतना कह कर महर्षि ने एक उपनिषद् वाक्य पढ़ा जिसमें कहा गया था– 'आत्मा को कोई हथियार छेदन नहीं कर सकता, न उसे आग ही जला सकती है' और फिर गरज कर बोले– '' यह शरीर तो अनित्य है। इसकी रक्षा में प्रवृत्त होकर अधर्म करना व्यर्थ है। इसे जिस मनुष्य का जी चाहे नष्ट कर दे।'' और इसके बाद चारों ओर अपने नेत्रों की ज्योति डालकर सिंहनाद करते हुए कहा–'' परन्तु मुझे शूरवीर दिखलाओ जो कहता हो कि वह मेरे आत्मा का नाश कर सकता है। जब तक ऐसा वीर इस संसार में नहीं दिखाई देता, तब तक मैं यह सोचने के लिए भी तैयार नहीं हूँ कि मैं सत्य को दबाऊंगा या नहीं?

सत्य को प्रतिष्ठित कर उसकी रक्षा करने के लिए महर्षि ने अनेक बार शास्त्रार्थ किये थे। उनके सत्य के प्रति अनुराग को जानने के लिए हम उनके एक प्रसिद्ध काशी शास्त्रार्थ का उल्लेख करते हैं। काशी शास्त्रार्थ की तिथि कार्तिक शुक्ला 12 संवत् 1926 (16 नवम्बर, सन् 1869) नियत की गई थी। एक व्यक्ति श्री बलदेव प्रसाद ने स्वामीजी से कहा कि महाराज वहां बहुत भीड़ होगी। काशी गुण्डों का नगर है, यदि शास्त्रार्थ फरुखाबाद में होता तो दस–बीस मनुष्य आपके भी होते। स्वामीजी यह बात सुनकर हँसे और बोले कि योगियों का निश्चित सिद्धान्त है कि सत्य का

यदि हम आर्य लोग धर्म के विषय में प्रीतिपूर्वक पक्षपात को छोड़कर विचार करें
तो सब प्रकार का कल्याण ही है। यही मेरी इच्छा है।

सूर्य अन्धकार की सेना पर अकेला ही विजय पाता है। जो पक्षपात रहित होकर ईश्वराज्ञानुकूल सत्य का उपदेश करता है, उसे भय कहां? सत्य पुरुष डरकर सत्य को नहीं छिपाते। जान जाए तो जाए, परन्तु ईश्वर की आज्ञा है कि जो सत्य है , वह न जाए। हे बलदेव! क्या चिन्ता है कि मैं एक हूँ, एक ईश्वर है, एक धर्म है और कौन है? यदि उन लोगों को आना होगा तो उनकी देखी जायेगी। दयानन्द के विपक्षी अनेक थे और उनके पास प्रचुर मात्रा में धनबल और जनबल भी था परन्तु वे चिन्ताग्रस्त थे। दयानन्द अकेला होते हुए भी ईश्वर पर विश्वास, सत्य पर श्रद्धा, साहस और धैर्य से परिपूर्ण थे। शास्त्रार्थ के दिन पचास सहस्र के लगभग लोग आए थे। काशी नरेश भी पधारे थे। स्वामीजी ने पण्डित ज्योतिस्वरूप को अपने पास बिठलाया था। यह बात काशी के पण्डितों को अखरी और उन्होंने काशी नरेश को संकेतों में सूचित किया कि दयानन्द को अकेले ही हराना कठिन है, ज्योतिस्वरूप का साथ पाकर वे एक और एक ग्यारह हो जायेंगे, फिर शास्त्रार्थ में जीतना सर्वथा कठिन हो जायेगा। महाराजा ने संकेत पाते ही पण्डित ज्योतिस्वरूप का हाथ पकड़ कर उन्हें पण्डितों के पास आगे बिठा दिया। जहां दयानन्द अकेले थे, उनके विरोध में बालशास्त्री सहित सत्ताईस पण्डित थे। पहले इधर–उधर के कई प्रश्नोत्तर हुए उसके बाद स्वामीजी ने उनसे अधर्म के लक्षण पूछे। पण्डित निरुत्तर हो गए। इसके बाद माधवाचार्य ने कुछ पुराने पत्रे निकाले और कहा कि वे वेद के पत्रे थे। उनमें प्रतिमा और मूर्त्ति शब्द मूर्त्ति के वाचक हैं। स्वामीजी ने बताया कि उन शब्दों के वे अर्थ नहीं थे। इस पर सब पण्डित चुप हो गए, तब माधवाचार्य ने कहा कि 'ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि' इस वाक्य में 'पुराणानि' शब्द पराुणों के लिए आया है। स्वामीजी ने बताया कि पुराण शब्द यहां विशेषण है, किसी पुस्तक का नाम नहीं है। माधवाचार्य तो चुप हो गए परन्तु वामनाचार्य ने दो पुराने पत्रे निकाले जो बहुत ही अस्पष्ट थे। उन्हें दिखाकर बोले कि वे वेद के पत्रे थे । उसमें लिखा था कि 'यज्ञसमाप्तौ सत्यां दशमें दिवसे पुराणपाठं श्रृणुयात्' इस वाक्य में पुराण शब्द विशेषण नहीं है। दयानन्द उस पत्र को देख ही रहे थे और दो मिनट का समय ही हुआ था कि विशुद्धानन्द ने कहा कि वे विलम्बित हो रहे थे। दयानन्द की पीठ पर हाथ रख कर बोले 'ओहो हार गए' अन्य सभी पण्डितों ने उनका साथ दिया और ताली बजाकर कोलाहल मचा दिया कि दयानन्द को हरा दिया है। उस समय कुछ गुण्डों ने दयानन्द के ऊपर ढेले, गोबर और मिट्टी फेंकी। इस प्रकार प्रसिद्ध काशी शास्त्रार्थ उच्छृंकलता के साथ समाप्त हो गया। भले ही पण्डितों ने झूठी विजय का ढोल पीटा परन्तु निष्पक्ष समाचार पत्रों ने वस्तु स्थिति का सच्चा वर्णन किया था। यह था महर्षि का सत्य की रक्षा के लिए आडम्बरों के पालन कर्ताओं से संघर्ष। उन्होने सत्य की रक्षा के लिए इस प्रकार के अनेकानेक युद्ध लड़े थे।

वे सत्य के अप्रतिम अनुरागी थे। अपने आत्म चरित्र में दयानन्द लिखते है कि विचारों, कर्मों और वाणी में सत्य उनके जीवन का प्रमुख अंग था। उन्होंने अपना प्रारम्भ एक कट्टरपन्थी हिन्दू के रूप में किया था, जैसे कि हम में से अधिकांश करते हैं। उसके बाद वे एक वेदान्ती

जैसे परमात्मा ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र और अन्नादि पदार्थ
सबके लिए बनाए हैं वैसे ही वेद भी सब के लिए प्रकाशित किए हैं।

बने और अन्त में वेदों में प्रतिपादित एकेश्वरवाद के ध्वजवाही बने। वेदों में एक परमेश्वर की अवधारणा है जिसे विभिन्न नामों से सम्बोधित किया गया है।

वेदों के आविर्भाव के बाद सृजित तथाकथित पवित्र साहित्य, जैसे पुराणों के घालमेल आदि की उन्होने उपेक्षा ही नहीं कटु आलोचना की जिनकी कट्टरपन्थी पण्डों, पुराहितो आदि ने अत्यन्त प्रशंसा की थी। उनकी वेदों पर सम्पूर्ण निष्ठा थी परन्तु उन्होंने 'वेद' शब्द के मूल अर्थ और विद्या पर अत्यधिक बल दिया था। उनके अनुसार वेद ज्ञान या विज्ञान है। इस प्रकार उनके धर्म का सारभूत तत्त्व सत्य है जो ज्ञान या विज्ञान द्वारा खोजा जाता है। फिर भी सत्य की कोई अन्तिमता नहीं है और उन्होंने इसकी खोज के लिए कोई सीमा निर्धारित नहीं की थी। आर्यसमाज के प्रथम दो नियमों में उन्होंने परमेश्वर की संकल्पना, विशेषता और गुणों का विवरण दिया है। आर्यसमाज का चौथा नियम है– 'सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सदा तत्पर रहना चाहिए' और पांचवाँ नियम है–''सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करना चाहिए''। इन नियमों से स्पष्ट हे कि उन्होंने हमारे दायित्वों के सम्बन्ध में अत्यन्त बल देते हुए निर्देशित किया है कि हम सदा सत्य को ही स्वीकार करें और असत्य का पता लगते ही उसे त्याग दें। यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने सत्य को स्वीकार करने के दायित्व को कभी संकुचित नहीं किया। वैदिक धर्म का उच्चतम आदर्श इस नीतिवचन में निहित है–'सत्यं परमोधर्मः' अर्थात् सत्य परम धर्म है। इसलिए हमें खुले मन और हृदय से सत्य का सम्मान और पालन करना चाहिए। यह प्रेरणा महर्षि के सत्यमय जीवन से ली जा सकती है।

उठो सपूतों !!

राधेश्याम 'आर्य' विद्यावाचस्पति

उठो सपूतों! आज तुम्हें!
शिवरात्रि जगाने आयी है।
दिव्य धरा के गहन तिमिर को,
दूर भगाने आयी है।।
ज्योति पूंज की पुण्य धरा पर,
छाया घना अंधेरा है।
दानवता की सैन्य वाहिनी ने
धरती को धेरा है।
अनाचार का, दुर्विचार का,
सूरज तो उग आया लेकिन,
दिखता नहीं सबेरा है।
ऋषि मुनियों की वसुन्धरा पर,
सोती क्यों तरूणायी है?
उठो सपूतों! तुम्हें!
शिवरात्रि जगाने आयी है।।
प्रेम–दया–ममता–समता के
तत्व बिलखते रोते हैं।
सत्य–धर्म के लक्षण सारे,
चिर निद्रा में सोते हैं।
बढ़े हुए पाखण्ड चतुर्दिक
कालिख लीपे–पोते हैं।
मानवता के तत्व सुनहरे,
गरिमा अपनी खोते हैं।
मद–आलस्य–प्रमाद भरी सरिता,
जन हृदय समायी है।
उठो सपूतो! आज तुम्हें!
शिवरात्रि जगाने आयी है।।
दयानन्द के सैनिक हो तुम,
निर्भय आगे आओ।
शौर्य–शक्ति दिखलाओ।
कसम तुम्हें है मातृभूमि की,
दानव मार गिराओ।
आर्य बनो, संकल्पित हो,
यह जगती आर्य बनाओ।
प्राची से दे रही शक्ति,
वह वाल अरूण अरूणायी है।
उठो सपूतों! आज तुम्हें!
शिवरात्रि जगाने आयी है।

जैसे परमात्मा ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र और अन्नादि पदार्थ सबके लिए बनाए हैं वैसे ही वेद भी सब के लिए प्रकाशित किए हैं।

ईश्वर–जीवात्मा विषयक यथार्थ ज्ञान के प्रदाता महर्षि दयानन्द

– मनमोहन कुमार आर्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती को किशारोवस्था में मृत्यु से बचने के लिए उपाय करने के साथ ईश्वर व जीवात्मा के यथार्थ स्वरूप के ज्ञान की खोज करने की प्रेरणा प्राप्त हुई थी। उसी दिन से वह मृत्यु पर विजय प्राप्त करने के साथ ईश्वर व जीवात्मा की खोज के मिशन पर लग गये। उन्होंने 21 वर्ष की अवस्था में गृह त्याग कर ईश्वर व जीवात्मा के सत्य स्वरूप का अनुसंधान किया और सफलता प्राप्त की। ऐसे अनेक विद्वान व योगी हुए हैं जिन्होंने ईश्वर का साक्षात्कार किया है परन्तु महर्षि पतंजलि के अतिरिक्त किसी ने ईश्वर के सत्यस्वरूप व योग का इस प्रकार से प्रचार किया हो जिस प्रकार से महर्षि दयानन्द ने किया है, इसका दूसरा उदाहरण इतिहास में उपलब्ध नहीं है।

महर्षि दयानन्द (1825–1883) के समय में ईश्वर व जीवात्मा के सत्य स्वरूप का ज्ञान उपलब्ध नहीं था। सभी विदेशी मतों में भी ईश्वर व जीवात्मा के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान नहीं है। भारत में सनातन वैदिक धर्म का स्थान मध्यकाल व बाद में पौराणिक मत ने ले लिया जहां 18 पुराणों के आधार पर ईश्वर व जीवात्मा के सम्बन्ध में अनेक मिथ्या विश्वास व मान्यतायें प्रचलित की गईं। इनके अतिरिक्त बौद्ध व जैन मत तो ईश्वर के अस्तित्व को ही स्वीकार नहीं करते। स्वामी शंकराचार्य ने अद्वैतमत का प्रचार किया। यह मत भी जीवात्मा के पृथक व स्वतन्त्र अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता। इनकी मान्यता है कि जीवात्मा कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं है अपितु जीवात्मा ईश्वर का ही एक अंश है। संसार वा सृष्टि के अस्तित्व की भी यह मत अवहेलना कर इस जीवात्मा को अन्धकार में रस्सी को देखकर सांप के होने की भ्रान्ति की तरह एक भ्रान्ति ही स्वीकार करता है और मानता है कि संसार का यथार्थ अस्तित्व है ही नहीं। ऐसी स्थिति में महर्षि दयानन्द ने प्रायः सारे देश का भ्रमण किया। सभी विद्वानों व महात्माओं, योगियों व ज्ञानियों की संगति की। उनसे ईश्वर, जीवात्मा व ईश्वर की प्राप्ति के उपाय आदि अनेक विषयों पर प्रश्नोत्तर किये। वह जहां–जहां भी गये, वहां के पुस्तकालयों में उपलब्ध धर्म विषयक साहित्य को लेकर उसका गहन अध्ययन किया। योग सीखा और समाधि को सिद्ध किया। इस पर भी उनकी तृप्ति नहीं हुई। स्वामीजी लगभग 3 वर्षों तक स्वामी विरजानन्द जी के अन्तेवासी शिष्य रहे थे और कक्षा में अध्ययन के बाद भी गुरूजी से विचार–विमर्ष व शंका समाधान करते रहते थे। वह गुरुजी की भावनाओं को अच्छी तरह से समझते थे। उन्होंने कुछ ही क्षणों में विचार कर गुरुजी के प्रस्ताव को अपनी स्वीकृति दे दी। अब महर्षि दयानन्द कार्य क्षेत्र में पदार्पण करते हैं। वह आगरा आकर अपने वेद प्रचार की रूप–रेखा बनाते हैं। देश में विद्यमान अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड आदि का अध्ययन कर वेद, तर्क, युक्ति, सृष्टिक्रम के विरुद्ध सभी मत–मतान्तरों की मिथ्या मान्यताओं व

मेरी अन्तःकरण से यही कामना है कि भारतवर्ष में
एक अन्त से दूसरे अन्त तक आर्यसमाज स्थापित हो।

विश्वासों का खण्डन करना आरम्भ करते हैं। जून, 1874 में ज्ञान की नगरी काशी में प्रचार के दौरान उनके एक भक्त राजा जयकृष्ण दास ने उनसे निवेदन किया कि महाराज आप जो उपदेश करते हैं उनका प्रभाव अस्थाई होता है। कुछ समय बात आपके विचार श्रोतागण भूल जाते हैं। अतः आप अपनी मान्यताओं व सिद्धान्तों पर आधारित एक ग्रन्थ लिख दें जिससे युग–युगान्तरों तक, पास व दूर देशों के लोग, उससे लाभान्वित होते रहेंगे। स्वामी दयानन्द को यह प्रस्ताव पसन्द आया और उसे स्वीकृति देकर वह इस कार्य में जुट गये और 12 जून, 1874 को आरम्भ कर लगभग साढ़े तीन महीनों में ही सत्यार्थ प्रकाश नाम से एक अपूर्व शास्त्र कोटि के ग्रन्थ की रचना कर डाली। यह ग्रन्थ धार्मिक व सामाजिक आन्दोलनों के इतिहास में संसार भर में अपने प्रकार का अपूर्व ग्रन्थ सिद्ध हुआ। इस ग्रन्थ का संसार के सभी मतों के ग्रन्थों पर व्यापक प्रभाव हुआ। इसके प्रभाव से चिन्तित प्रायः सभी मतों ने अपनी मान्यताओं को तर्क व युक्ति पर स्थापित करने की कोशिश की। यह बात अलग है कि इस प्रयास में उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं हुई क्योंकि असत्य मान्यताओं को तर्क व युक्ति के आधार पर सिद्ध करना सम्भव नहीं होता। इसी क्रम में सन् 1875 में महर्षि दयानन्द मुम्बई में प्रचार कर रहे थे। वहां लोगों ने स्वामी जी से प्रार्थना की वेदों के विचारों, मान्यताओं व सिद्धान्तों के प्रचार व प्रसार के लिए एक ऐसे संगठन की स्थापना होनी चाहिये जिससे कि स्थानीय व देश भर में प्रभावशाली रूप से नियमित प्रचार–प्रसार किया जा सके। स्वामी जी ने इस प्रस्ताव पर भी संजीदगी से विचार किया और इस शंका के साथ स्वीकार किया कि यदि नियमों के पालन व आचरण में तालमेल नहीं होगा तो प्रचार के स्थान पर हानि भी हो सकती है। स्वामीजी ने विचार कर इस नये संगठन व वेद प्रचार आन्दोलन का नाम 'आर्य समाज' रखा। आर्य का अर्थ श्रेष्ठ गुण व आचरण सम्पन्न व्यक्ति होता है। इस प्रकार से आर्य समाज का अर्थ हुआ कि श्रेष्ठ गुणों व आचरणों वाले मनुष्यों का संगठन अर्थात् आर्य समाज। स्वामी दयानन्द ने वेदों के महत्व को समझा। वेदों की लुप्त संहिताओं को ढूंढा व उन्हें प्राप्त कर वेद भाष्य करना आरम्भ कर दिया। ऋग्वेद के संस्कृत व हिन्दी में भाष्य लिखना आरम्भ कर सुझाव मिलने पर साथ–साथ उन्होंने यजुर्वेद का भाष्य भी आरम्भ कर दिया। यजुर्वेद का भाष्य पहले समाप्त हो गया। ऋग्वेद मन्त्र संख्या में अधिक होने के कारण चलता रहा। अक्तूबर, 1883 में विष दिए जाने से मृत्यु होने के समय तक वह 7 वें मण्डल के 61 वें सूक्त का भाष्य कर रहे थे। उनकी मृत्यु के बाद उनके अनेक शिष्यों ने अवशिष्ट वेद भाष्य को पूरा ही नहीं किया अपितु कई शिष्यों ने स्वतन्त्र रूप से चारों वेदों पर भाषायें व टीकायें लिखीं। इस प्रकार से वेदों का पुनरुद्धार करने का श्रेय महर्षि दयानन्द सरस्वती को है। देश में प्रचार करने के साथ उन्होंने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, संस्कार विधि, आर्याभिविनय, व्यवहारभानु, गोकरुणानिधि, संस्कृत–वाक्य–प्रबोध सहित अनेकानेक सैद्धान्तिक ग्रन्थ व लघु पुस्तकें लिखीं। उनके प्रचार का परिणाम यह हुआ कि अन्य मतों के

स्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् सामान्य सार्वजनिक धर्म, जिसको सदा से मानते आए हैं और मानेंगे भी
इसलिए उसको सनातन नित्य धर्म कहते हैं कि जिसका विरोध कोई भी न हो सके।

प्रचारकों ने आर्य समाज की चुनौती को अपने पक्ष की निर्बलता को जानकर स्वीकार नहीं किया। आर्य समाज की चुनौती थी कि वेदों की मान्यतायें ईश्वर प्रदत्त हैं और सर्वांश में सत्य हैं। महर्षि दयानन्द के वैदिक धर्म के प्रचार के कारण देश से अन्धविश्वास, अज्ञान व कुरीतियों आदि में कमी आई। विद्या का प्रचार व प्रसार हुआ। गुरुकुलों की स्थापना से शताधिक वैदिक विद्वान तैयार हुए। जाति–भेद रहित स्वयंवर वा प्रेम विवाह में वृद्धि हुई और आज यह तेजी से बढ़ती ही जा रही है। मूर्ति–पूजा पर लोगों को सन्देह होने लगा। लाखों लोग मूर्ति पूजा करना छोड़ चुके हैं। वेद ईश्वरीय ज्ञान सिद्ध हो चुका है। फलित ज्योतिष पर भी समाज का बड़ा वर्ग विश्वास नहीं रखता। अवतारवाद में लोगों के विश्वासों में भी कमी आई है। अब कोई पौराणिक विद्वान आर्य समाज के विद्वानों से मूर्ति पूजा, अवतार वाद व फलित ज्योतिष आदि पर शास्त्रार्थ करने के लिए राजी नहीं है।

योग व योग पद्धति से उपासना में वृद्धि हुई, जन्मना जाति व्यवस्था भी कमजोर व शिथिल हुई जिसके कुछ दशकों में पूरी तरह से समाप्त हो जाने की सम्भावना है। आर्य समाज ने समाजोत्थान के क्षेत्र में भी सफल क्रान्ति की है। इस प्रकार से हम देखते हैं कि महर्षि दयानन्द विगत 5,000 वर्षो में ऐसे पहले धार्मिक व सामाजिक नेता हुए हैं जिन्होंने ईश्वर व जीवात्मा के सत्य स्वरूप को हमारे समक्ष रखा। महर्षि से पूर्व गीता में दिए गए इस ज्ञान का प्रचार था कि जीव ईश्वर का अंश है। महर्षि ने सत्यार्थप्रकाष के नवें समुल्लास में यह स्पष्ट किया कि जैसे लोहे में अग्नि ही का दाह प्रकाश है, लोहे का नहीं, वैसे चेतनता अन्तःकरण में ब्रह्म की है अपनी नहीं, तो ब्रह्म ही कर्ता, भोक्ता, बद्ध और मुक्त हो जायेगा। इसलिए ब्रह्म जीव या जीव ब्रह्म एक कभी नहीं होता, सदा पृथक्–पृथक् हैं।

ईश्वर सत्य, चित्त व आनन्द स्वरूप है, वह निराकार, सर्वशक्तिमान् न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना व नियमित वेदों का स्वाध्याय करना योग्य व परमधर्म है। इसी प्रकार से उन्होंने जीवों का जो स्वरूप खोजा व प्रचारित किया वह सत्य, चित्त, अल्पज्ञ, अनादि, अजन्मा, अविनाशी, नित्य, जन्म–मरण–धर्मा, धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष की प्राप्ति जिसका मुख्य उद्देश्य है, ईश्वरोपासना, यज्ञ–अग्निहोत्र, माता–पिता–आचार्य–विद्वान् अतिथियों की सेवा करने वाला व सभी प्राणियों पर दया रखने वाला है। ईश्वर की प्राप्ति का सत्य मार्ग महर्षि दयानन्द ने संसार के लोगों को बताया। यहां यह बताना भी समीचीन है कि सभी मार्गों व किसी एक वेदेतर मार्ग पर चलकर ईश्वर व जीवन का लक्ष्य प्राप्त नहीं होता। हमारा अनुभव है कि ईश्वर व जीवन के लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त करने का केवल एक ही मार्ग है और वह वेदों का दिखाया हुआ मार्ग है जिसका उद्घोष महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन काल में उपदेशों व अपने सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों में किया है। हम संसार के सभी बुद्धिजीवियों को महर्षि दयानन्द का साहित्य पढ़कर अपने जीवन के उद्देश्य व उसको प्राप्त करने की पद्धति को जानने के लिए निष्पक्ष भाव से उसका अनुशीलन करने का अनुरोध करते हैं। 'नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।' अन्य दूसरा कोई मार्ग नहीं है। इन्हीं शब्दों के साथ लेख को विराम देते हैं।

दक्षिणा का रहस्य

—प्रभु आश्रित जी महाराज

महात्मा —मैं पहले बतला चुका हूँ कि यज्ञ का नाम मानव संसार में प्रेम है। प्रेम के लिए ज्ञान की बड़ी आवश्यकता है। किसी को किसी अंश में भी जाने बिना प्रेम नहीं हो सकता और प्रेम होने पर ही इसका गुह्यतम और यथार्थ रहस्य जाना जाता है। ज्यों—ज्यों रहस्य मालूम होता है, त्यों—त्यों और प्रेम बढ़ता है। वेद में दक्षिणा के लिए सूक्त—के—सूक्त हैं, देखें ऋग्वेद मण्डल 10, सूक्त 107।

1. दक्षिणा अन्धकार से मुक्त करने वाली ज्योति है।
2. दक्षिणा दिव्य पूर्ति करने वाली है — दैवी पूर्तिर्दक्षिणा देवयज्या।
3. दक्षिणावान् की समाज में उत्तम स्थिति होती है।
4. दक्षिणावान् ही समाज का वास्तविक नेता होता है — दक्षिणावान् प्रथमो हूत एति दक्षिणावान् ग्रामणीरग्रमेति।
5. दक्षिणा से भौतिक सम्पत्ति की भी प्राप्ति होती है —

   दक्षिणाश्वं दक्षिणा गां ददाति।
6. दक्षिणावान् का गृहस्थ सुखमय होता है।
7. लोग दक्षिणावान् की सब तरह सेवा—शुश्रूषा करते हैं।
8. दक्षिणा का यज्ञ के साथ वही सम्बन्ध है जो गाय के साथ रस्सी का है। रस्सी गाय के मूल्य की तुलना में तुच्छ होती है, पर गाय को जहां चाहे ले— जा सकती है, फिरा सकती है, घुमा सकती है। बिना रस्सी के गाय एक स्थानी है। 'दक्षिणा वै यज्ञानां पुरोगवी' अर्थात् 'दक्षिणा यज्ञ के आगे चलने वाली होती है।' जहां—जहां यज्ञ जाता है, यज्ञ किया जाता है, वहां—वहां पहले दक्षिणा जाती है। ऐतरेय ब्राह्मण में लिखा है — 'यज्ञोऽदक्षिणो रिष्यति तस्मादाहुः दातव्यैव यज्ञे दक्षिणा' — 'दक्षिणा के बिना यज्ञ का वास्तविक स्वरूप नष्ट हो जाता है।
9. सर्वसाधारण पुरूषों की आयु शरीर—समाप्ति के साथ समाप्त हो जाती है, परन्तु दक्षिणावान् पुरूषों की आयु उसके बाद भी रहती है। वे अपना नाम पीछे भी छोड़ जाते हैं।
10. जिस कामना से यज्ञ किया जाता है उसी कामना की पूर्ति उस यज्ञ से होती है। यदि धन—संग्रह के लिए यज्ञ किया गया हो तो धन—प्राप्त होगी, और यदि दिव्य भावों की पूर्ति के लिए, शिक्षा आदि की वृद्धि के लिए यज्ञ का सम्पादन हुआ है तो इसी की पूर्ति होगी। यज्ञ का नाम 'इष्टकामधुक्' है।

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्ट कामधुक्।।
गीता 3/10।।

अर्थात् 'परमात्मा ने यज्ञ— (संगति की प्रवृत्ति) — सहित प्रजाओं को उत्पन्न करके उनसे कहा कि तुम इसके द्वारा जो कुछ चाहो उत्पन्न कर लो। यह यज्ञ तुम्हारी सब अभिलषित कामनाओं को पूर्ण करने वाला हो।

यज्ञ तो एक शक्तिपुञ्ज है जो अच्छाई या बुराई दोनों के लिए प्रयुक्त हो सकता है। प्राचीन लोग इससे स्वर्ग—प्राप्ति भी करते थे।

जिन मनुष्यों को मोक्ष की, आध्यात्मिक उन्नति की इच्छा नहीं होती, जो अपने सामाजिक जीवन की उन्नति के लिए रुचि नहीं

> धन्य है आर्यावर्त्त के आर्य लोग कि जिन्होंने ईश्वर के सृष्टिक्रम के ही अनुसार परोपकार में ही अपना तन, मन, धन लगाया और लगाते हैं।

रखते, जिनकी एक–मात्र इच्छा अपने पास सब भोग–विलास का सामान एकत्रित करके स्वयं मजे उड़ाने की होती है, जो पुरूष इन्हीं में सुख मानते हैं उनमें इस मन्त्र में कहा गया है कि हे मनुष्य! यदि तुम्हें मोक्ष आदि की भी जरूरत नहीं, केवल सोना–चांदी, गाय–घोड़े तथा अन्न आदि की प्राप्ति की इच्छा है तो वह भी दक्षिणा से अच्छी तरह पूर्ण होगी। जिस तरह कारखानों में, कम्पनियों में मामूली भाग (शेअर) खरीदकर मनुष्य उसका स्वामी या साझीदार कहलाता है, घर बैठे उसके लाभ को लेता है, ऐसे ही यज्ञ करने वाला और उसकी दक्षिणा देने वाला अपने–आपको उस चीज का साझीदार बना सकता है। देखो! वेद कहता है – 'इदं युद्विश्वं भुवनं स्वश्चैतत् सर्वं दक्षिणैभ्यो ददाति' (ऋग्वेद 10.107–8) अर्थात् 'यह जो सम्पूर्ण संसार है और इसका सुख है, वह सब यज्ञार्थ किया हुआ त्याग उन दानी पुरूषों को प्रदान करता है।'

मेरे प्यारे सज्जनों! मैंने अपनी तरफ से दक्षिणा के बारे में कोई मन घड़न्त बात नहीं बतलाई। यह सब वेद भगवान् की आज्ञा है। यह और बात है कि तुम इस रहस्य को न समझो, क्योंकि तुममें जब तक वेद के ऊपर श्रद्धा नहीं होगी तब तक तुमको कुछ नहीं मिलेगा। मैं तुमको एक मोटा सिद्धान्त बता दूं। मनुष्य यात्री है और यात्रा के लिए सवारी, पांव, साइकल, मोटर, गाड़ी, घोड़ा आदि होते हैं। शरीर मार्ग की यात्रा करने के लिए दक्षिणा एक ऐसी बढ़िया और उत्तम सवारी है कि इसके बराबर कोई सवारी नहीं। यज्ञ का शब्द तो छोटा है, पर अर्थ बहुत है; अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध तक यज्ञ में आते हैं। ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेवयज्ञ, अतिथियज्ञ, ये सब यज्ञ हैं और इनका नाम पंच महायज्ञ है। सब यज्ञों में ये बड़े हैं, क्योंकि ये नित्य के हैं। जैसे शरीर में रस से वीर्य तक सात धातु हैं, पर नित्य के चलाने वाला सारे शरीर का आश्रय रक्त है, ऐसे ही ये यज्ञों में महायज्ञ हैं और ऐसा ही दक्षिणा का अर्थ समझो – शब्द छोटा, पर अर्थ विस्तृत। किसी भी प्रकार के त्याग का नाम दक्षिणा है, पर यह शब्द विशिष्ट इस यज्ञ के लिए है। अब अगर तुम्हारा सन्तोष हो तो बेहतर, अन्यथा मैं और युक्ति देकर समय ही गंवाना समझता हूं। जब तुमको श्रद्धा वेद पर हो गई तो युक्ति भी सफल होगी।

देश के युवक–युवतियों को पाश्चात्य संस्कृति के दुष्प्रभाव से बचाने के लिए

युवक–युवती रक्षा आन्दोलन

आन्दोलन के प्रमुख उद्देश्य–

अश्लील फिल्मों, विज्ञापनों, टी.वी.सीरियल, इन्टरनैट पोर्न साइट्स, लिव इन रिलेशनशिप, समलैंगिकता, सिगरेट, शराब, नशाखोरी, हुक्काबार इत्यादि पर पूर्ण प्रतिबन्ध।

आन्दोलन के सक्रिय सहयोगियों का राष्ट्रव्यापी रजिस्ट्रेशन प्रारम्भ हो चुका है।
सम्पूर्ण देश में जिला स्तर पर संगठन की कार्यकारिणी का गठन किया जा चुका है।
शीघ्र ही अपने क्षेत्रों में जिला स्तरीय आन्दोलन के लिए सम्पर्क करें।

देश के युवक–युवतियों को देशभक्त, शाकाहारी, श्रेष्ठ नागरिक बनाने हेतु ''युवक–युवती रक्षा आन्दोलन'' से जुड़ने के लिए सम्पर्क करें–

योगाचार्य डॉ. विनोद कुमार — **07500191719**

इ. प्रेम प्रकाश शर्मा — **09412051586**

yuvakuvatijakshaandolan@gmail.com • nirogbharat@gmail.com

और कोई नहीं मिलता

–पं. शिवशर्मा उपदेशक

दोपहरी में, एक दुकानदार दाना दलता जाता था और दुःखी होकर यह कहता जाता था ।– ''इस के बदले मौत होती तो अच्छा था, दाना दलते–दलते तो मरा जा रहा हूँ।'' अकस्मात् एक योगी उस समय उस मार्ग में जा रहे थे, वे इन वचनों को सुनकर रुक गये। उस पर दया दर्शाते हुए बोले – ''सेठजी, चलो मैं तुमको स्वर्ग में भेज देता हूँ।' योगी के वचन सुनकर सेठजी बोले – '' महाराज जी! बहुत दिनों से मैं स्वर्ग जाने को सोच रहा हूं। परन्तु मेरे पास जो धन है, उसको कोई भोगने वाला नहीं है। यदि कोई सन्तान उत्पन्न हो जाये तो अवश्य ही मैं आपके साथ स्वर्ग चला जाता। फिर कभी फेरा करना। मुझे मौका लगा तो मैं भी आपके साथ वहां चल चलूंगा।'' सेठजी की बात सुन कर साधु जी वहां से चल दिये।

संयोग से इधर कुछ सालों में सेठजी के दो पुत्र उत्पन्न हुए पर इसके साथ–साथ सेठजी भी इस अनित्य शरीर को छोड़कर चल बसे। कुछ काल के उपरान्त योगीजी को पुनः इस सेठ की सुध आई। एक दिन वह उनकी दुकान पर पहुंचे और पूछने लगे –''भाई, यहां पर एक मोटे से सेठजी दाना दला करते थे। वे कहां चले गये?'' उन लड़कों ने उत्तर दिया कि उनका स्वर्गवास हो गया। योगीजी ने योग बल से सेठजी का पता लगाया तो उनको अपने ही घर में गाय का बछड़ा बना पाया। योगी जी ने समीप जाकर उस बछड़े से कहा, 'सेठ जी, अब तो आप पशु हो गये। अब भी इच्छा हो तो स्वर्ग चलो।'' बछड़ा बोला – ''महाराज, क्या कहूं? जी तो करता है, परन्तु मेरे बेटे प्रतिदिन पैठ को जाया करते हैं, वे मेरी पीठ पर बोझा लादकर ले जाते हैं। यदि मैं स्वर्ग चला जाता हूं तो इनका बोझ इतनी लगन से कौन ढोयेगा।'' योगी जी ने फिर सेठजी से कुछ न कहा और अपनी राह पकड़ ली।

कुछ साल बाद सेठजी ने बछड़े का शरीर छोड़कर, कुत्ते का शरीर धारण किया। कुछ काल के उपरान्त योगीजी को अपने इस कृपापात्र की फिर सुध आई। वे फिर उसी स्थान पर आकर बैल को खोजने लगे। पूछने पर यह ता लगा लिया कि बैल तो मर गया। अब योगी जी ने योगबल से मालूम किया सेठजी की आत्मा कुत्ते में है। योगी जी ने बड़ी नम्रता से कहा –''अब तो चलो, क्या इस से अधिक ओर दुर्दशा भोगनी है।'' कुत्ता बोला, ''योगी जी! क्या कहूं? आपका आना बड़ा भारी मालूम पड़ता है परन्तु आप ही सोचें कि ऐसी अवस्था में भला कहां जाना होता है। देखिये, मेरे घर में इस समय कोई नहीं है। सबके सब बाजार गये हैं। मैं अकेला ही द्वार पर बैठा हूं। घर में बहू–बेटियां लाखों के गहना पहने बैठी हैं। मैं स्वर्ग चला जाऊं तो इनकी देखभाल कौन करे? फिर कभी आप इधर का फेरा करना, चलूंगा।''

योगी जी फिर रम गये। एक वर्ष उपरान्त फिर योगी जी को अभागे सेठ की सुध आई। फिर उसी स्थान पर उन्हें ढूंढने लगे। उन्होंने योगबल से पता कर लिया कि कुत्ता मर

जो धर्म युक्त व्यवहार में ठीक–ठीक वर्त्तता है, उसको सदा सर्वत्र लाभ और
जो विपरीत वर्त्तता है, वह सदा दुःखी होकर अपनी हानि कर लेता है।

गया है। सेठजी उसी घर की मोरी में कीड़ा के रूप में रह रहे हैं। योगीजी बोले–''अब क्या विचार है? इससे और अधिक अधोगति दरकार है क्या?'' इतना सुनते ही सेठजी क्रोध से लाल–पीला हो कांपते हुए बोले – ''क्या मेरे अतिरिक्त आपको और कोई स्वर्ग में ले जाने को नहीं मिलता? जाओ, मैं नहीं जाता। यहां पर मैं आनन्द से अपनी पोती–पोतियों का मुख देखता हूँ। स्वर्ग में जाकर क्या तुम्हारा मुंह देखूंगा?'' साधु जी मन में कहने लगे – ''मोहग्रसित प्राणी ऐसा ही हुआ करते हैं।'' वह चले गये।

फल – मनुष्यों को इस लोक के साथ–साथ परलोक का भी ध्यान रखना योग्य है।

सत्यग्राही साधक (चिकित्सक)

–डॉ. सुधीर कुमार आर्य

सत्यमेव जयते नानृतम्
सत्येन पन्थाः विततो देवयानः।

सत्य के मार्ग पर चलने वाले को देवत्व की प्राप्ति होती है। क्योंकि सदा सत्य की ही जीत होती है, असत्य की नहीं।

एक बार द्रोणसागर से गढ़मुक्तेश्वरादि स्थानों में घूमते हुए स्वामी दयानन्द सरस्वती जी गंगातट पर पहुंचे। उस समय स्वामी जी के पास धर्मपुस्तकों के अतिरिक्त शिवसन्ध्या, हठयोग प्रदीपिका, योग बीज, केशराणिसंगति आदि पुस्तकें थी। इनमें कुछ पुस्तकों में नाड़ी चक्र का अति विस्तृत तथा जटिल वर्णन था, जिसे स्वामी दयानन्द समझ नहीं पा रहे थे। इस नाड़ी चक्र की सत्यता में उन्हें सदैव सन्देह बना रहता था तथा सदैव सन्देह निवारण को प्रयत्न करते थे।

एक दिन गंगा तट पर विचरण करते हुए स्वामी जी ने पानी में बहते हुए एक शव को देखा। इस शव को देखते ही नाड़ी चक्र के विषय में वर्तमान संशय को दूर करने का मन में विचार किया। मन में विचार आते ही पुस्तकें तथा अपने वस्त्र नदी के किनारे पर सुरक्षित रखकर नदी प्रवाह में कूदकर बहते हुए शव को बाहर निकाल लाए। अपने साथ लिए हुए तेज चाकू से शव को चीरकर पहले हृदय भाग को पृथक किया, हृदय के आकार तथा पुस्तक लिखित वर्णन का मिलान किया। इसी प्रकार सिर, गर्दन आदि अंगों का तथा नाभि चक्रों का परीक्षण किया। परन्तु पुस्तक में वर्णित अंगों तथा चक्रो का वर्णन शव के वास्तविक अंग चक्रों से लेशमात्र भी मेल नहीं खाता था। इस परीक्षण से स्वामी जी समझ गये कि इन पुस्तकों में वर्णित नाड़ी चक्र कोरा काल्पनिक है।

स्वामी जी ने तत्क्षण ही पुस्तकों को फाड़कर शव के साथ गंगा में बहा दिया और यह भी निश्चय मन में दृढ़ता से कर लिया कि वेद–उपनिषद्–पातज्जंल– सांख्य शास्त्र से अतिरिक्त लिखित योगविषयक समस्त ज्ञान–विज्ञान की पुस्तकें असत्य तथा भ्रान्तिकारक हैं।

शिक्षा – अनार्षग्रन्थों के पठन–पाठन से सत्य ज्ञान की प्राप्ति नहीं होती। मनुष्य को सत्य ज्ञान की प्राप्ति के लिए सदैव प्रयत्नशील होकर उद्यम करना चाहिए।

ज्ञान प्राप्ति से आत्मा की उन्नति और आरोग्यता होने से शरीर के सुख से व्यवहार और परमार्थ कार्यों की सिद्धि होना। उससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये सिद्ध होते हैं। इनको प्राप्त होकर मनुष्यों को सुखी होना उचित है।

प्रभु अच्छा ही करता है

स्व० धर्ममुनि परिव्राजक

तत् सर्व में शिव अस्तु।
(वह प्रभु मेरे लिए सब कल्याण–अच्छा ही करता है।)

एक राजा के मन्त्री का यह अटल विश्वास था कि प्रभु जो कुछ करता है अच्छा ही करता है। एक बार राजा और मन्त्री आखेट के लिये गये। किसी भयानक वन में पहुंचे, वहां सिंह पर शस्त्र प्रहार करने से राजा की एक अंगुली कट गई। राजा ने मन्त्री से कहा – 'मन्त्री जी हमारी अंगुली शस्त्र से कट गई।' मन्त्री ने कहा ' परमेश्वर जो कुछ करता है, अच्छा ही करता है।' राजा यह सुन बहुत अप्रसन्न हुए और उन्होंने कहा – ''हमारी तो अंगुली कट गई और तू कहता है कि परमेश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है।' यह कहकर मन्त्री को उसी समय निकाल दिया। मन्त्री वन से घर लौटा।

राजा उसी दिन आखेट खेलते–खेलते एक दूसरे राज्य में पहुंच गये। वहां के राजा को बलि प्रदान के लिए एक मनुष्य की आवश्यकता थी। उसके छोड़े हुए सिपाही इस राजा को पकड़ ले गए। जब वहां पण्डितों ने इस राजा को देखा तो उसकी अंगुली कटी हुई मिली। पण्डित जी ने कहा– ''यह मनुष्य तो अंग–भंग है। अंग–भंग की बलि नहीं दी जाती।'' अतः राजा छोड़ दिए गए और प्राण बचा वह अपने राज्य को लौटे। मार्ग में राजा ने विचार किया कि मन्त्री सच कहता था कि ईश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है। यदि मेरी अंगुली आज न कट गई होती, तो मेरा बलि हो जाती।

घर आते हुए उसने मन्त्री को बुलवाया। मन्त्री डरते–डरते कि राजा जाने मुझे क्या कहेंगे– राज सभा में प्रवेश किया और प्रणाम कर बैठ गये।

तब राजा ने मन्त्री से कहा – ''मन्त्री तुम्हारा कहना नितान्त सत्य है कि ईश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है, क्योंकि जब हमने तुमको वन से निकाला तो हम आखेट खेलते–खेलते एक राज्य में पहुंचे। वहां के राजा को बलि प्रदान के लिए एक मनुष्य की आवश्यकता थी, इससे उसके दूत मुझे पकड़ ले गए पर अंगुली कटी होने से वहां के पण्डित ने मुझे अंग–भंग जानकर छोड़ दिया। मेरी अंगुली कटने से तो ईश्वर ने अच्छा यह किया कि मेरे प्राण बचे, पर आपको जो मैने निकाल दिया और इतने दिन तक नौकरी से अलग किया तो आपके लिए ईश्वर ने क्या अच्छा किया?'' मन्त्री ने कहा– 'महाराज यदि आप मुझे न निकाल देते और मैं आपके साथ रहता, तो मैं अंग–भंग न होने से बलि प्रदान से कभी न बचता।

भरोसा कर तू ईश्वर पर तुझे धोखा नहीं होगा।
यह जीवन बीत जायेगा तुझे रोना नहीं होगा।।

संन्यासीजन अपनी रक्षानिमित्त गढ़ और गुहा का आश्रय वहीं ढूंढा करते।
हमारा रक्षक तो केवल भक्तवत्सल भगवान् है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के क्रान्तिकारी विचारों की मौलिक झलक

पं. उम्मेद सिंह विशारद्

युगों के उपरान्त अठारवीं शताब्दी में इस धरती पर देव दयानन्द जैसे महान सुधारक ने जन्म लिया, जिसने सभी समाज सुधारकों को पीछे छोड़कर एक नयी वैचारिक क्रान्ति का शंखनाद किया। उन्होंने अद्‌भुत साहस दिखाकर धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक कुरीतियों पर जोरदार प्रहार किया। ऐसे कठिनतम कार्य को तो एक महामानव ही कर सकता था।

भारत के इतिहास में यह एक महत्वपूर्ण घटना पायी जाती है कि उन्होंने सम्पूर्ण मानव जाति के जीवन को पलट दिया। ऋषि दयानन्द आदित्य ब्रह्मचारी थे। स्वामी शंकराचार्य ब्रह्मचारी थे। स्वामी विवेकानन्द भी ब्रह्मचारी थे। इन महापुरुषों के विचारों ने भारत के कोने–कोने को आच्छादित कर दिया था। इन्होंने अपने–अपने समय में महान कार्य किया और मनुष्यों में एकता के द्वारा एक दूसरे से कड़ी जोड़ने का प्रयास किया। ऐसा प्रतीत होता है कि भविष्य में भी इस देश का कर्णधार वही हो सकेगा, जो ब्रह्मचारी रहकर देश की चुनौतियों को स्वीकार कर उनको चुनौती देगा।

देखने में आया कि महर्षि दयानन्द ने भारत के नर–नारियों में व्याप्त कुरीतियों पर प्रहार किया। यह अपने आप में सर्वोच्च महान कार्य था। आइए उन पर विचार करते हैं।

1. धार्मिक क्षेत्र में रूढ़िवाद पर प्रहारः–

भारत का धर्म वेदों से बंधा हुआ था और नर–नारी में वेदों के प्रति अगाध श्रद्धा थी और हिन्दु धर्म की आधारशिला वेद थे। दयानन्द से पूर्व वेदों के विद्वानों ने उनके अर्थ का अनर्थ किया हुआ था, उनमें सायणाचार्य, महिधर, मैक्समूलर,जैकोवी आदि ने वेद मंत्रों का इतिहास परक अर्थ करके सम्पूर्ण समाज को गहरे अंधरे कुएं में डाल दिया था। उन्होंने प्रचलित किया कि वेदों में पशुबलि है, वेदों में नारी को पढ़ने का अधिकार नहीं हैं। वेदों में जाति प्रथा मूर्ति पूजा, भूत–प्रेत, जादू–टोना है। वेदों में काल्पनिक देवी–देवता हैं। वेदों में छुआछूत है। इस प्रकार वेदों के अर्थों को अपने स्वार्थ के लिए बदल दिया गया था। भारत की भोली जनता इसका शिकार बन गयी थी।

महर्षि दयानन्द ने सर्वप्रथम वेदों के उन मन्त्रों के शुद्ध अर्थ करके प्रमाणित किया कि महिलाओं व शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार है। वेदों में मूर्ति पूजा नहीं है, जाति व्यवस्था नहीं है, पशुबलि नहीं है। वेदों के शब्दों का सही अर्थ करके जनता के सामने रखा और सदियों से चली आ रही परम्पराओं को धाराशायी कर दिया। महर्षि दयानन्द ने धर्म के सत्य अर्थ को समाने रखकर दिशा ही बदल दी। सत्य, धर्म का निरन्तर प्रचार करते रहने के लिए आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज ने सम्पूर्ण विश्व में अन्धविश्वास की चूलें हिला कर रख दीं।

2. सामाजिक क्षेत्र में रूढ़िवाद पर प्रहारः–

महर्षि दयानन्द का सर्वथा मौलिक दृष्टिकोण था। यही कारण था कि सिर्फ भूत के साथ चिपटे रहने वाले रूढिवाद का सामाजिक

> दयानन्द के नेत्र तो वह दिन देखना चाहते हैं कि काश्मीर से कन्या कुमारी तक और अटक से कटक तक नागरी अक्षरों का ही प्रयोग और प्रचार हो। मैंने आर्यावर्त्त भर में भाषा का ऐक्य सम्पादन करने के लिए ही अपने सकल ग्रन्थ आर्य भाषा में लिखे और प्रकाशित किये हैं।

क्षेत्र में उन्होंने बहिष्कार किया। वे सामाजिक कुरीतियों के पक्षधर नहीं थे। उनके समय में हिन्दु समाज नवीनता से डरता था। वह बहुत कठिन दिन थे, सदियों पुरानी सामाजिक कुप्रथाओं को मिटाना आसान कार्य नहीं था, किन्तु देव दयानन्द सत्य की राह से जरा भी नहीं डिगे। एक नयी सामाजिक क्रान्ति को जन्म दे ही दिया। ऋषि दयानन्द के पुरुषार्थ का परिणाम था कि समाज में धीरे–धीरे परिवर्तन आने लगा। स्त्रियों के प्रति जहां 'स्त्री शूद्रो नाधीयताम्' का राग अलापा जाता था, वहीं कन्याओं के पढ़ने के लिए पाठशालायें खोली जाने लगी। शुद्रों पर शोषण सम्बन्धी विचार बदलने लगे। यज्ञोपवीत पहनने का सबको अधिकार मिल गया। जातिवाद, भेदभाव, छुआछूत, मृत्युभोज, काल्पनिक देवी–देवता और अनेक सामाजिक कुरूतियां बदलने लगी। ऋषि दयानन्द ने समाज कल्याण के लिए जो रूपरेखा बना दी, उसी को लेकर 20वीं शताब्दी के सामाजिक तथा राजनैतिक नेताओं ने कार्य किया। महात्मा गांधी आदि विचारकों ने अधिकांश उन्हीं सुधारों का अनुसरण किया।

3. राजनैतिक क्षेत्र में प्रहारः–

भारत का जनमानस यह विश्वास करता था कि देश में जिसका राज्य चला आ रहा हो, उसमें कितनी भी विकृतियां क्यों न हों वही ठीक है। महर्षि दयानन्द ने उस पर भी प्रहार किया। उन्होंने कहा जब तक राष्ट्र का नेतृत्व करने वाला विद्वान्, धार्मिक व सदाचारी व सादगी वाला न हो, तब तक वह कुशल शासन नहीं दे सकता है। उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के 8वें सम्मुलास में लिखा–अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य प्रमाद तथा परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की ही क्या कहनी, जो कुछ भी है सो विदेशियों से पदाक्रान्त हो रहा है। दुर्दिन जब आता है तब देश को अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं। कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। उन्होंने देश की उन्नति के विषय में कहा– धर्मशक्ति वेदानुकूल + राजशक्ति वेदानुकूल + ज्ञानभक्ति वेदानुकूल + और धनशक्ति वेदानुकूल सत्य के आधार पर होनी चाहिए। इस प्रकार महर्षि दयानन्द जी स्वतन्त्र भारत में स्वस्थ, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक परिवर्तन करके भारत को पुनः जगत गुरू, धर्मगुरू, सोने की चिड़िया बनाना चाहते थे, जिसका प्रभाव वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व पर शनै–शनै पड़ने लगा है। ऐसे महान् देव पुरूष को हम गर्व से भारत का पितामह कह सकते हैं।

सूचना

पवमान पत्रिका के सुविज्ञ पाठको को सूचित किया जाता है कि सितम्बर 2014 से पत्रिका का वार्षिक मूल्य 150 रुपये हो गया है। जिन ग्राहकों ने पत्रिका शुल्क जमा नहीं किया है वह पिछले वर्षों सहित इस वर्ष का शुल्क शीघ्र जमा कर दें। आगे की माह की पवमान पत्रिका केवल उन्हीं ग्राहकों को भेजी जाएगी जिनके द्वारा पत्रिका का शुल्क जमा कर दिया गया हो। आप कैनरा बैंक, क्लाक टावर, देहरादून (IFSC code : CNFB0002162) खाता 'पवमान' खाता सं. 2162101021169 में शुल्क जमा करा सकते हैं। आश्रम के दूरभाष नं. 0135–2787001 पर सूचना प्राप्त होने पर आपके द्वारा जमा शुल्क की रसीद आपके पते पर भेज दी जायेगी।

— प्रकाशक

जब कोई आर्य एकाकी हो तो उसे स्वाध्याय करना चाहिए। दो आर्य हों तो उन्हें परस्पर प्रश्नोत्तर और सम्वाद करना उचित है। यदि दो से अधिक आर्य एकत्रित हों तो उनको चाहिए कि परस्पर सत्संग करें। किसी धर्मग्रन्थ का पाठ सुनें सुनावें।

ऋषि का बोधोत्सव कैसे मनाओगे?

–अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द

स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान 23 दिसम्बर 1926 को हुआ था। उनका यह उद्‌बोधक अमर सन्देश लाहौर से प्रकाशित होने वाले आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मासिक पत्र 'आर्य' के फरवरी 1926 के ऋषि बोधांक में से लिया गया है। ऋषि बोध के उपलक्ष्य में दिया गया स्वामी श्रद्धानन्द जी का यह अन्तिम सन्देश जो उनके हृदय की पवित्रता का तो द्योतक है ही, साथ ही साथ वैदिक सिद्धान्तों और ऋषिवर दयानन्द के प्रति उनकी अगाध निष्ठा का भी परिचायक है। यह सन्देश आज भी उतना ही उपयोगी और जीवन में धारण करने योग्य है जितना कि 1926 में था।

क्या सत्ताईसवीं बार फिर व्याख्यान सुन, बाद में चार आनें भेंट चढ़ा कर पल्ला छुड़ाओगे? ऋषि ने तुम्हें सीधा मार्ग दिखाया था, उस पर चलने की कभी तुम्हारी बारी आयेगी या नहीं?

ऋषि दयानन्द ने जन्म से मृत्यु पर्यन्त ब्रह्मचारी रहकर दिखा दिया। क्या तुम्हें ब्रह्मचर्य के पालन का बोध अभी हुआ है वा नहीं? यदि विद्यार्थी और अविवाहित हो, तो क्या वीर्य का संयम करके पवित्र वेद का अध्ययन करते हो? यदि गृहस्थ हो तो ऋतुगामी होने का दावा कर सकते हो, वा प्रामाणिक व्यभिचार में ही लिप्त हो? यदि अध्यापक हो तो कहीं अब्रह्मचारी रहकर तो ब्रह्मचारियों के पथ प्रदर्शक नहीं बन रहे?

प्रकृति पूजा का अनौचित्य समझ कर ऋषि दयानन्द ने उसका खण्डन किया और ईश्वर पूजा का समर्थन किया। परमात्म देव में निमग्न होकर उन्होंने इस असार संसार को त्याग दिया। क्या तुम नियम पूर्वक दोनों काल प्रेम से सन्ध्या करते हो वा केवल खण्डन में ही कर्तव्य की इति श्री कर देते हो? क्या तुम्हारी सन्ध्या तोते की रटन्त ही है वा कभी उस समय की प्रतिज्ञाओं पर अमल भी शुरू किया है? क्या सदा कड़े खण्डन द्वारा सर्व साधारण को धर्म के शत्रु ही बनाते रहोगे या उपासना द्वारा पवित्र होकर गिरे से गिरे व्यक्तियों को उठाकर धर्म की ओर खींचने में कृत कार्य होना चाहोगे?

क्या तुम्हारा धर्म–भाव और सिद्धान्त प्रेम अन्यों की निर्बलताओं को जगत् प्रसिद्ध करने में ही व्यय होगा, वा तुम कभी अपने सदाचार को ऊंचे ले जाकर निर्बलों को ऊपर उठाने का भी प्रयत्न करोगे?

ऋषि ने योगाभ्यास से अलंकृत होकर वेदों का मर्म बतलाया, परन्तु विनय भाव इतना कि भूल सुधारने के लिए हरदम तैयारी जाहिर की। क्या तुम सिद्धान्ती होने के अभिमान को छोड़कर कभी दूसरे को सुनने को तैयार होगे?

माना कि तुम अपनी अपूर्व तर्क शक्ति से सब कुछ सिद्ध कर सकते हो, परन्तु क्या तुमने कभी सोचा है कि जिस ऋषि ग्रन्थ से भाव चुराकर तुमने तर्क का महल खड़ा किया है, उसने कोरे तर्क को अपने कार्यक्रम में क्या स्थान दिया था?

आर्य सन्तान! आओ! आज से फिर अपने जीवन पर गहरी दृष्टि डालो और समझ लो कि जिस सत्य की प्राप्ति के लिए मूल शंकर के हृदय में इस रात्रि उत्कट इच्छा उत्पन्न हुई उसकी तलाश में उसने शारीरिक कष्टों की

हमारा शरीर बहुत देर तक नहीं रहेगा। आप आजीवन हमारी पुस्तकों से सन्देश लेते रहना। जहां तक बन पड़े अपने भूले भटके भाइयों को भी सन्मार्ग दिखलाते रहना।

कुछ भी परवाह नहीं की, और जंगल और वियावान पहाड़ और मैदान सब की खाक छानते और जन जन से, विनय भाव के साथ उसी का पता लगाते हुए अन्त को सत्य स्वरूप में ही लीन हो गए। चारों आश्रमों में ब्रह्मचर्य का पालन करते, गुण कर्मानुसार वर्णो की व्यवस्था स्थापन करते, उपासना से हृदय से सत्याग्रही और प्राणिमात्र के लिए कल्याण मार्ग में चलने का आज जो शुभ संकल्प करेंगे, उनका में भी ऋणी हूंगा।

अपील

आपको विदित है कि वैदिक साधन आश्रम तपोवन नालापानी देहरादून वर्ष 1949–50 से योग साधना के माध्यम से महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के संदेश को देश के कोने–कोने में पहुंचाने के लिये प्रयत्नशील है। इस प्रयोजन हेतु वर्ष में कई बार योग शिविरों का आयोजन किया जाता है। जिसकी सूचना हम अपनी मासिक पत्रिका 'पवमान' के द्वारा आश्रम के प्रति श्रद्धावान सदस्यों तक पहुंचाते हैं। तपोवन आश्रम में 'तपोवन आरोग्यधाम' चिकित्सालय भवन तथा योग शिविरों के आयोजन हेतु महात्मा प्रभुआश्रित सत्संग भवन का निर्माण प्रारम्भ कर दिया गया है। दोनों भवनों का कवर्ड एरिया लगभग 13000 वर्गफिट है। अभी तक दोनों भवनों की छतें डाली जा चुकी हैं तथा इन भवनों के निर्माण पर लगीग 86 लाख रुपया व्यय हो चुका है। अब भवनों का प्लास्टर, फर्श, खिड़की दरवाजे, रंगाई, पुताई एवं फर्नीशिंग का कार्य शेष है। अवशेष कार्यों के लिये लगभग 70 लाख रुपये की तत्काल आवश्यकता है। आपके सात्विक दान से इन भवनो का निर्माण शीघ्र पूर्ण हो सकता है। दानराशि ओरियन्टल बैं ऑफ कामर्स, राजपुर रोड़ देहरादून (IFSC code : ORBCO100002) के खाता 'वैदिक साधन आश्रम' खाता सं. 00022010029560 में जमा करा सकते हैं। आश्रम को दिया गया दान इनकमटैक्स की धारा 80 जी के अन्तर्गत कर मुक्त है। दानराशि बैंक खाते में जमा करने के उपरान्त आश्रम कार्यालय के दूरभाष नं. 0135–2787001 पर सूचित करने पर दान की रसीद आपके पते पर भेज दी जायेगी।

वैदिक साधन आश्रम में होने वाले कार्यक्रमों की सूची

1. **22.2.2015 से 2.3.2015 तक 'वैदिक योग प्रशिक्षण (प्रथम स्तर) शिविर'' का आयोजन।**
2. **13, 14 एवं 15 मार्च 2015 को ''गायत्री यज्ञ' का आयोजन।**
3. **14 अप्रैल से 22 अप्रैल 2015 तक 'सत्यार्थ प्रकाश एवं वैदिक संध्या प्रशिक्षण शिविर' का आयोजन।**
4. **06.5.2015 से 10.5.2015 तक ''ग्रीष्मोत्सव'' कार्यक्रम का आयोजन।**

अधिक जानकारी हेतु सचिव वैदिक साधन आश्रम, तपोवन देहरादून से सम्पर्क करें
0135–2787001 / 9412051586

वैदिक धर्म का प्रचार कार्य बहुत अच्छा है। हम जानते हैं कि हमारे इस जीवन में पूर्ण न हो सकेगा परन्तु चाहे दूसरा जन्म धारण करना पड़े इस महत कार्य को अवश्य ही पूर्ण करूँगा।

दीर्घायु बनाम वृद्धावस्था

– देवराज आर्यमित्र, नई दिल्ली

यह सच्चाई है कि यदि दीर्घ आयु होगी तो वृद्ध अवस्था अवश्य होगी। यदि जवानी में अन्धे बने रहे अर्थात् मन इन्द्रियों के दास बनकर रहे तो वृद्ध अवस्था में दुर्गति के कारण रोना पछताना पड़ेगा। मैं अपने को देखते हुए अन्य व्यक्तियों को देख रहा हूं कि धीरे–धीरे सिर के बाल सफेद हो रहे हैं। मुंह में दांत हिलने लगते हैं। आंखों की रोशनी घटने लगती है। कानों में ठीक सुनाई नहीं देता। घुटनों में दर्द रहता है। पाचन क्रिया मंद हो गई है। भोजन शीघ्र हजम नहीं होता। अतः कब्ज की शिकायत रहती है। इस कारण पेट में गैस बनती है। रक्तचाप भी बिगड़ जाता है। चलने में चक्कर आने लगते हैं। विवश होकर हस्पतालों में डाक्टरों का इंतजार करना पड़ता है। एक दिन में प्रातःकाल से सोने तक कितने प्रकार की दवाइयां खानी पड़ती है फिर भी अनेक रोगों के कारण चारपाई से चिपककर विकलांग बन जाता है।

वृद्धावस्था में ऐसी दुर्गति का कारण जवानी की लापरवाही है। यौवन अवस्था में आहार विहार में निरंतर कुपथ्य (बदपरहेजी) से शरीर के अंग ग्रन्थियां आंते कमजोर और खराब हो जाती हैं। अतः कार्यक्षमता और सहनशक्ति समाप्त हो जाती है। जब मैं नौजवानों को धूम्रपान, मद्यपान आदि का नशा और मीट, मछली, अंडे, चिकन खाते हुए देखता हूँ तब प्यार से समझाने का यत्न करता हूं बेटे! इस जवानी को बर्बाद मत करो। इन दुर्व्यसनों को छोड़ दो अन्यथा जल्दी बूढ़े हो जाओगे, पछताओगे। कुछ युवक उत्तर देते हैं अंकल! हम देख रहे हैं, इनमें क्या मजा है। जब नुकसान होगा तो स्वयं छोड़ देंगे। मैंने कहा – अच्छा तो एक शेर नोट कर लो –

होश अब आया है घर का घर उजड़ जाने के बाद।
शौक उड़ने का हुआ है पर कतर जाने के बाद।

दोस्तों! यदि अपना भला चाहते हो तो आज ही अपना खानपान सुधार लो। यह मांस, मछली अंडे, शराब आदि मनुष्य का भोजन नहीं है। इनके खाने से शरीर में अनेक प्रकार के भयंकर रोग लग जाते हैं। बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। यदि स्वस्थ रहना चाहते हो तो शुद्ध शाकाहारी बनो। वृद्धावस्था में आराम से रहने के लिए परिश्रम पुरूषार्थ करो।

बुढ़ापे में सुख शांति का जीवन व्यतीत करने के लिए निम्नलिखित को ध्यान रखो –

क. अपनी इच्छाओं को दूर करके दाल–रोटी खाओ, ईश्वर के गुण गाओ। सन्ध्या, स्वाध्याय और सत्संग किया करो। प्रातः समय भ्रमण के लिए जाया करो।

ख. जीवन में कभी कष्ट आता है तो कर्मों का फल समझ कर सहन करो। व्यर्थ की चिंता मत करो, मौत आती है तो आने दो। ईश्वर का चिन्तन करोगे तो सहनशक्ति आयेगी।

ग. किसी से कुछ कहना है तो प्यार से कहो क्रोध मे मत बोलो। कोई माने न माने इसे अपना मान अपमान मत समझो। हर हाल में चिंतामुक्त खुश रहो। जो जैसे करेगा वैसा भरेगा यह समझकर पुत्रैषणा, लोकैषणा और वित्तैषणा छोड़ दो।

हमारे देश के लोग समय का महत्व नहीं जानते। नियमवद्ध कार्य करना उनके लिए दुष्कर कर्म है। प्रातः से सायं पर्यन्त इनके सारे काम अनियमित होते हैं। समय का व्यर्थ खोना, इनकी अस्त–व्यस्त व्यवस्था का एक भारी कारण है।

मोक्ष और ब्रह्मऋषि दयानन्द

– अभिमन्यु कुमार खुल्लर

वेद और शास्त्रों के अनुसार मनुष्य जीवन का लक्ष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष निर्धारित किया गया है। इस चतुष्टय की प्राप्ति के लिए मनुष्य आदिकाल से कामना करता रहा है। कितना ही प्रबल धर्मोपदेश क्यों न हो, व्यक्ति स्वभावगत इस क्रम को बदल देता है। अर्थ और काम की प्राप्ति में समग्र जीवनयापन कर कामना करता है मोक्ष पाने की। क्रम में प्रथम वर्णित कार्य–धर्म को तो नजरअन्दाज ही कर जाता है। मैं इस विषय में कुछ भी अधिक कहने की न तो योग्यता रखता हूं और न ही पात्रता।

ज्ञान के प्रथम स्ट्रोक में मनुष्य को यह पता चला गया कि उसे एक न एक दिन मरना पड़ेगा। इस तथ्य की अनुभूति देशकाल की सीमा को लांघकर समस्त विश्व में व्याप्त हो गई। सामान्य जन तो कुछ उपाय कर पाए अथवा नहीं, पर राजाओं या शासकों ने अपने को अमर करने के प्रयत्न किए और उन प्रयत्नों के चिन्ह आज भी पाये जाते हैं।

मिस्त्र के राजाओं–फेरों को यह मालूम था कि उनकी मृत्यु तो होगी पर यह नहीं मालूम था मृत्यु के बाद जिस स्थान पर वह जावेंगे वहां उन्हें दास–दासियां, सोने–चांदी के बर्तन तथा अन्य आवश्यक सामग्री मिलगी अथवा नहीं। इनको साथ ले जाने की इच्छा ने पिरामिड बनवाये। इन पिरामिडो में वे तो मृत्यु के पश्चात दफना दिये गये पर भोजन–सामग्री सोने–चांदी के बर्तन आदि समस्त उपभोग की सामग्री दास–दासियां जीवित ही दफना दी गई। यही हाल चीन में हुआ। चीन के राजाओं ने तो फौज की टुकड़ियों को जीवित दफना दिया जिससे अज्ञात स्थान में जाकर वे शासन कर सकें। ग्रीक और रोम सभ्यताएं अर्थ और काम को ही जीवन का उद्देश्य मानकर इस क्षेत्र में चर्मोत्कर्ष को प्राप्त कर काल के गाल में समा गई क्योंकि उनके पास धर्माचरण और मोक्ष का लक्ष्य नहीं था। हमारे देश में भी पौराणिकों की मोक्ष की कल्पना स्वर्ग–नरक तक ही सीमित रही। इस्लाम की कल्पना भी जन्नत और दोजख तक रही। वेद में वर्णित 'मोक्ष' की अवधारणा का ये स्पर्श भी नहीं कर पाये।

वेदज्ञान के फलस्वरूप ऋषियों ने मनुष्य जीवन का लक्ष्य चतुष्टय फल प्राप्ति रखा और उसका क्रम भी निर्धारित किया। इस क्रम के बिना चौथे लक्ष्य का पाना असम्भव है, यही क्रम इन ऋषियों ने निर्धारित किया।

मूलशंकर ने 14 वर्ष की आयु में धर्म के एक स्वरूप ईश्वरोपसना की सीढ़ी पार की जब उसे शिवरात्रि पर बोध हुआ कि प्रचलित शिवमूर्ति की पूजा–अर्चना ईश्वरोपसना नहीं है। सच्चा शिव और कहीं है। उसकी खोज करनी पड़ेगी। यह खोज 21 वर्ष तक चली, जब तक कि गुरुवर्य विरजानन्द जी के पास मथुरा नहीं पहुंचे।

प्रथम लक्ष्य प्राप्ति के पश्चात् तो सीढ़ी

> योगी जनों का यह दृढ़ विष्वास है कि अविद्या की तमोराषि को सत्य का सूर्य अकेला ही तुरन्त जीत लेता है।
> जो मनुष्य पक्षपात का परित्याग करके केवल लोक हित के लिए ईष्वर की आज्ञानुसार सत्योपदेष करता है, उसे भय कहां?

'अर्थ और काम' तो वह पहले ही लांघ चुके थे। जब वैभव सम्पन्न पैतृक गृह और विवाह बन्धन के आयोजन को छोड़कर निकल पड़े थे।

गुरु विरजानन्द से धार्मिक चर्चा और ज्ञान प्राप्ति के ढाई वर्ष के शिष्यत्व–काल में उन्हें वह सब मिला जिसके लिए उनकी अतृप्त आत्मा बेचैन थी। आशा थी कि गुरू मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करेंगे। गुरु ने यह नहीं किया। मोक्ष प्राप्ति के लिए वेद और शास्त्र में वर्णित ध्यान–धारणा, इन्द्रिय निग्रह, उपासना और समाधि के मार्ग का उपदेश न कर गुरु ने दयानन्द का सम्पूर्ण जीवन, समस्त ज्ञान और शक्ति भारत के चतुर्दिक कल्याण के लिए मांग लिया। नहीं पूछा एकलव्य ने, गुरू दायें हाथ का अगूठा देकर मैं धनुर्विद्या में कैसे पारंगत होऊंगा? नहीं पूछा दयानन्द ने गुरुवर्य से मेरे मोक्ष प्राप्ति के लक्ष्य का क्या होगा? गुरु ने उन्हें व्यक्तिगत मोक्ष के लिए लक्ष्य से हटाकर समष्टिगत मोक्ष की ओर मोड़ दिया। दयानन्द को व्यक्तिगत मोक्ष मिला या नहीं, यह तो विधाता ही जाने पर जिस मार्ग पर गुरु ने डाल दिया उस मार्ग ने तो उनकी व्यक्तिगत मोक्ष की आकांक्षा को ही सदा–सर्वदा के लिए समाप्त कर दिया। अन्तः प्रेरणा से उन्होंने भारत के पुनरुद्धार को ही जीवन का लक्ष्य निर्धारित कर लिया, चाहे उन्हें मुक्ति मिले न मिले। यही तो उनका ऋषित्व है। शायद विधाता ने उस मुक्त आत्मा को भारत के पुनरुद्धार के लिए ही भेजा था।

ब्रह्मऋषि दयानन्द भलीभांति जानते थे कि प्रत्येक भारतवासी की आत्मा में मोक्ष प्राप्ति का लक्ष्य आबद्ध है, चाहे उसके कर्म कुछ भी क्यों न हों। देखिए, वह किस सरलता से, व्यक्ति के चाहे–अनचाहे, उसे सत्य मार्ग पर मोड़कर मुक्ति का उपाय बताते थे।

1. हाफिज मुहम्मद हुसैन, दरोगा चुंगी, अजमेर ने स्वामी जी से पूछा– मुनष्य की मुक्ति किस बात से होती है? कहा कि केवल सत्य से ही मुक्ति होती है और किसी प्रकार से नहीं। होती। पृष्ठ 673 पं. लेखराम

2. जोधपुर के महाराज प्रतापसिंह ने पूछा – कोई ऐसा काम बतलावें, जिससे हमारा मोक्ष हो। स्वामी जी ने कहा कि और काम तो तुम्हारे मोक्ष के नहीं हैं, परन्तु एक न्याय तुम्हारे हाथ में है। यदि प्रजापालन न्याय से करोगे तो तुम्हारा मोक्ष हो सकता है। पृ 816 पं. लेखराम

3. जब सच्चे मन से अपनी आत्मा, प्राण और सब सामर्थ्य से परमेश्वर को जीवन भजता है तब वह करूणामय परमेश्वर उसको अपने आनन्द में स्थिर कर देता है। पृ 307 पं. लेखराम

4. ब्रह्मऋषि से एक मोची ने कहा, भगवन् आप के प्रवचन सुनकर मुझे ऐसा लगता है कि मेरा तो जीवन ही व्यर्थ गया। पूजा–पाठ, जप–तप मैंने कुछ किया नहीं, मेरी सद्गति नहीं हो सकती। ब्रह्मऋषि ने उसे आश्वासन दिया –तुहारी भी मुक्ति हो सकती है, यदि तुम अपना काम पूरी मेहनत व ईमानदारी से करो और उचित दाम लो।

मोक्ष प्राप्ति के इन संकेतों के गूढ़ार्थ समझकर इन्हें आत्मसात् कीजिए तो। आपकी इसी जीवन में कायापलट हो जावेगी और ब्रह्मर्षि की वाणी की सार्थकता आप स्वयं अनुभव करेंगे।

जो केवल भाण्ड के समान परमेश्वर के गुण कीर्तन करता रहता है
और अपने चरित्र को नहीं सुधारता उसका स्तुति करना व्यर्थ है।

प्रकृतिकजन्य उत्पादों से रोगोपचार

– श्री महेन्द्र कुमार मेहता

कोई भी व्यक्ति यह दावा नहीं कर सकता कि वह पूरी तरह स्वस्थ है, उसके शरीर में कोई भी रोग नहीं है। शायद इसी तथ्य को ध्यान में रखकर कहा गया है 'शरीरं खलु व्याधिमन्दिरम्।' आज के वैज्ञानिक युग में जब कि फसलोत्पादन की हर अवस्था में रसायनों का प्रयोग होता है, रासायनिक उर्वरकों को उपयोग में लाया जाता है, तथा फल–सब्जियों को रोगों एवं कीटनाशकों से बचाने के लिए विषैले पदार्थों का छिड़काव किया जाता है, प्रश्न उपस्थित होता है जो रसायन कीटों को मार देते हैं, क्या वे मानव के लिए हानिकारक नहीं होंगे? इसका उत्तर 'हां' में ही होगा। यही कारण है कि मानवमात्र में रोगों की संभावना उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है।

एक समय था जब आबाल वृद्धों के छोटे मोटे रोगों का उपचार 'दादी मां के नुस्खों' में निर्दिष्ट घर में दिन–प्रतिदिन मसालों आदि के रूप में प्रयोग में आने वाले उत्पादों तथा पानी, मिट्टी आदि से कर लिया जाता था। आज मानव पुनः इनका महत्व अनुभव करता जा रहा है। ये नुस्खे आज के सन्दर्भ में भी पर्याप्त लाभप्रद सिद्ध हो सकते हैं। आइए, आप भी इनको आजमा कर देखिये।

पानी से रोगोपचार

कहा जाता है कि जल बिन सब सून। दैनिक जीवन में पानी का विशेष महत्व है। बिना पानी के कोई कार्य संभव नहीं। यहां तक कि अथर्ववेद एवं चिकित्साशास्त्र के ग्रन्थों में भी पानी के प्रयोग से रोगों के उपचार का उल्लेख मिलता है। टब–बाथ, पानी की पट्टी का प्रयोग तो उपयोगी है ही, परन्तु इससे भी सरल एवं त्वरित लाभकारी है प्रातः कालीन जलपान। प्रातः काल सूर्योदय से पूर्व बिना मुंह धोये और बिना मंजन–ब्रुश किये प्रतिदिन चार बड़े गिलास (लगभग सवा लीटर) रात का रखा हुआ पानी पीना चाहिए, तदनन्तर लगभग 1 घंटे तक कुछ न खायें। केवल मंजन–ब्रुश कर सकते हैं तथा नित्य कर्म से निवृत्त हो सकते हैं। भोजन एवं नाश्ते के साथ पानी का सेवन न करें, वरन् कम से कम डेढ़–दो घंटे बाद ही पानी लें। यदि शुरू–शुरू में एक साथ चार गिलास पानी पीना संभव न हो तो प्रथम चरण में एक–दो गिलास से आरंभ कर धीरे–धीरे बढ़ा कर चार गिलास पर आ जायें, तदुपरांत नियमित रूप से चार गिलास पानी पीते रहें। वायु रोगों व जोड़ों के दर्द से पीड़ित व्यक्ति यह प्रयोग एक दिन में तीन बार करें तो लाभकारी होगा।

इस प्रकार नियमित रूप से पानी पीने से कब्ज से छुटकारा मिलता ही है, साथ ही डायबिटीज, ब्लडप्रेशर, हृदय रोग, जोड़ो का दर्द, मस्तिष्क–शोध, सभी प्रकार के मूत्र रोग, गर्भाशय के रोग, बबासीर, लकवा, कफ–खाँसी–दमा, समस्त नेत्र–रोग, ल्यूकोरिया, अम्लपित्त, सूजन बुखार, सिरदर्द, एनिमिया, मोटापा, टी.बी., लीवन के रोग, स्त्री रोग, गैस्ट्रिक, कमर दर्द, वात–पित्त–कफजन्य रोग आदि से भी लाभ होता है।

जलपान के अतिरिक्त गर्म अथवा ठंडे पानी का प्रयोग, जलनेति, कटिस्नान, पानी की पट्टी से चिकित्सा आदि भी अनेक रोगों में लाभकारी है।

विद्या का वही फल है कि जो मनुष्य को धार्मिक होना आवश्यक है। जिसने विद्या के प्रकाश से अच्छा जान कर न किया और बुरा मान कर न छोड़ा तो क्या वह चोर के समान नहीं है?

आर्यसमाज और राष्ट्रीय पर्व

– नरसिंह सोलंकी

'स्वदेशी शासन चाहे कितना ही बुरा क्यों न हो विदेशी शासन से अच्छा ही रहता है।

परतंत्र भारत में सबसे पहले यह विचार निर्भीकता एवं स्व प्रेरणा से प्रकट करने वाले महर्षि दयानन्द सरस्वती ही थे जिन्होंने हमें आजादी की प्रेरणा दी। इसी प्रेरणा के फलस्वरूप 1857 से स्वतंत्रता आन्दोलन की शुरूआत हो गई थी। बाद में देशी रियासतों के शासकों ने भी अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध किया। कई सेनानी स्वतंत्रता के संग्राम में कूद पड़े, यथा सरदार भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद, रामप्रसाद बिस्मिल, उधमसिंह, राजगुरू, सुखदेव, रोशनलाल आदि ने अपने प्राण त्याग दिये। राजनैतिक स्वरूप के अहिंसक आंदोलन में महात्मा गांधी पं. जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभ भाई पटेल, लाल बहादुर शास्त्री, दादा भाई नौराजी, विनायक दामोदर दास, मौलाना आजाद आदि ने भाग लिया और जेल यातनाएं सही।

महर्षि दयानन्द ने समाज सुधार का बहुत बड़ा आंदोलन गुरु विरजानन्द की प्रेरणा से हाथ में लिया। समाज में कुरीतियां व अंधविश्वास घर कर गये थे। सर्वत्र समाज में अंधकार छाया हुआ था, उसे मिटाने के लिए विधवा स्त्री विवाह चालू करवाया, बालविवाह बंद करने की प्रेरणा दी, गौ संरक्षण एवं छुआछूत मिटाने हेतु वर्ण व्यवस्था की मर्यादा बतलाई, जादू, टोने–टोटके मिटाने की प्रेरणा दी व एक ही परमपिता परमेश्वर की न्याय व्यवस्था एवं धर्म के सत्य स्वरूप को समझाने के लिए अमर ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना की। बाद में इन्हीं सुधारों के विषय में भी महात्मा गांधी ने पहल करके अपने जीवन में उतारा व लोगों को भी प्रेरणा दी। संविधान जो 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ उसमें भी इन्हीं सुधारों को प्राथमिकता मिली जिन्हें गांधी जी ने अपनाया व जिन्हें सर्वप्रथम ऋषि दयानन्द ने उद्घोषित किया था।

आज हम आजाद भारत में सांस ले रहे हैं। हमें राजनीति में भाग लेकर संसद द्वारा किये जा रहे सुधार कार्यक्रम में व कानून बनाने में हिस्सा लेना चाहिए। संसद में जब प्रकाशवीर शास्त्री (आर्य विचारक) का भाषण होता था तब संसद में पूर्ण रूप से शान्ति रहती थी व सांसद बड़े ध्यान पूर्वक उनका भाषण सुनते थे। आज संसद में स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती पहुंचे हैं तो उनका लाभ भी पूरे भारत वर्ष को प्राप्त होगा।

हमारे आर्य समाज एवं उच्च संस्थाओं में राष्ट्रीय पर्व पर तिरंगा ध्वज फहराने का रिवाज नहीं है। हां अगर कहीं किसी ने पर्व मना भी लिया तो उसका उल्लेख सामने नहीं आता। हमने केवल ओ3म का भगवा झंडा ही मान रखा है। कहने को तो हम बड़े गर्व से कहते हैं कि भारत के स्वतंत्रता संग्राम ने 80 प्रतिशत से अधिक लोग जो शहीद हुए व जिन्होंनं यातनाएं सही वो आर्य समाजी विचारधारा से प्रभावित थे। हमारे पूवजों ने स्वतंत्रता संग्राम में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया था तो उसका प्रतिफल से प्राप्त गणतंत्र दिवस आदि राष्ट्रीय पर्व मनाने में पीछे क्यों रहे। हम भारतवासी जैसे होली, दिवाली, ईद–उल–फितर, गणेश चतुर्थी, जन्माष्टमी, क्रिसमस डे, लोहड़ी, दुर्गाष्टमी आदि पर्व बड़े उत्साह से मनाते हैं, वैसे ही राष्ट्रीय पर्व क्यों नहीं मनाते। क्या हमने किसी प्रकार की कोई राष्ट्रीयता की कमी तो नहीं है हमें इस विषय में गंभीरता से सोच विचार की आवश्यकता है।

हम ज्ञान प्राप्त करते हुए सौ वर्षों तक जीएं

– डॉ. प्रशस्यमित्र शास्त्री (महोपदेशक)

अथर्ववेद के उन्नीसवें काण्ड के 67 वें सूक्त का तीसरा मंत्र अन्यन्त छोटा होते हुए भी अपने अन्दर महान् अर्थ गौरव समेटे हुए है –

बुध्येम शरदः शतम् – इसका सीधा और स्पष्ट अर्थ है कि हे ईश्वर! हमारा जीवन सौ वर्षों तक हो तथा यह बोध या सत्यज्ञान से ओत प्रोत हो। इस मन्त्र में मनुष्य की जो औसत आयु एक सौ वर्ष मानी गई है वह ज्ञान सम्पन्न भी होनी चाहिए। जैसे हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि –

पश्येम शरदः शतम्, जीवेम शरदः शतम् आदि वैसे ही बुध्येम शरदःशतम् की भी प्रार्थना वेद में की गई है।

स्वामी दयानन्द का सम्पूर्ण जीवन ज्ञानमयः–

स्वामी दयानन्द ने बालक मूलशंकर के रूप में जब पहली बार एक साधारण मन्दिर में शिवलिंग पर चूहों को धमा चौकड़ी करते हुए देखा तो उनके मन में यही विचार आया कि क्या यह शिव हो सकता है? वे प्रस्तर के इस जड़स्वरूप को कभी भी चेतन भगवान् के रूप में स्वीकार करने को तैयार नहीं हुए क्योंकि उनके अन्दर विद्यमान ज्ञान प्राप्ति की भावना उन्हें इस अज्ञान को स्वीकार करने को उत्साहित नहीं करती थी। हम–आप जैसे अनेक लोग प्रतिदिन ही इस प्रकार की घटनाएं होते देखते हैं फिर भी हमारे अन्दर यह जिज्ञासा की भावना क्यों जागृत नहीं होती जो बालक मूलशंकर के अन्दर उस दिन हठात् जागृत हो गई। अतः जीवन में ज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है। भगवान श्रीकृष्ण ने भी गीता में कहा है – ज्ञानग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन! यह ज्ञान रूपी अग्नि ही हमें गलत कार्य करने से रोकती है तथा भविष्य में उत्कृष्ट कर्म की ओर प्रेरित करती है। न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। संसार में ज्ञान के समान तो पवित्र कोई कुछ नहीं है।

शिवरात्रि का बोधः–

शिवरात्रि के उस गहन अन्धकार में बालक मूलशंकर ने जो ज्ञान प्राप्त किया उस ज्ञान से न केवल उनका अन्तर्मन ही आलोकित हुआ अपितु संसार के लाखों मनुष्यों को बोध हुआ तथा उन्हें एक दिशा मिल गयी। स्वामी दयानन्द के मन में उत्पन्न होने वाले इसी जिज्ञासा भाव ने उन्हें नदियों, नालों, जंगलों पहाड़ों और निर्जन एकान्त स्थान में घूम घूमकर ज्ञान प्राप्त करने एवं सच्चे गुरुओं के अन्वेषण के लिए बाध्य कर दिया। अन्त में उन्हें मथुरा में स्वामी विरजानन्द जी के माध्यम से वह ज्ञान राशि प्राप्त हो सकी।

स्वामी विरजानन्द ने उन्हें बताया कि वास्तविक ज्ञान तो आर्ष ग्रन्थों में है। ऋषिकृत ग्रन्थ ही मनुष्य के लिए उपादेय हैं। इनमें व्यर्थ का शब्दाडम्बर नहीं है। स्वामी जी ने इस रहस्य को समझा तथा इसी के प्रचार प्रसार में वे आजीवन लगे रहे।

उन दिनों साधारणतया प्राप्त न होने वाले वेद संहिताओं को उन्होंने मानवमात्र के लिए सुलभ बनाया। वेद एवं ज्ञान के नाम पर होने वाले गुरूडम पाखण्ड एवं अन्धविश्वासों का खण्डन करते हुए वेदभाष्य प्रस्तुत कर वेद के सत्य अर्थों का प्रकटन किया। गहन अज्ञान

मेरा उद्देश्य इस प्रकार लोगों को मिलाना है। सकल समुदायों को एकता में लाना है। मैं चाहता हूँ कि कोल भील से लेकर ब्राह्मण पर्यन्त, सबमें एक ही जातीय जीवन की जागृति हो। चारों वर्णों के लोग एक दूसरे को अंग–अंगी समझें।

के कष्टपूर्ण वातावरण में जी रहे भारतीयों का उद्धार किया तथा उन्हें अनेक आतर्किक एवं मूर्खता पूर्ण परम्पराओं एवं चिन्तनों से मुक्त कर सही वैदिक जीवन जीने के लिए प्रेरित किया।

अज्ञानी एवं पाखण्डी लोगों ने उन दिनों देश की तीन चौथाई आबादी को शिक्षा से वंचित कर रखा था। स्त्री, शुद्र, पिछड़े आदि लोगों को ज्ञान प्राप्ति का अधिकार ही नहीं था। बाल विधवाएं कराह रही थीं। वृद्ध एवं अनमेल बहुविवाह की प्रथा भी जारी थी। सती प्रथा को भी लोग वेद सम्मत बतलाने पर तुले हुए थे – ऐसी विषम परिस्थिति में स्वामी दयानन्द की बातें लोगों को अद्भुत लगती थीं।

उनकी प्रेरणा से ही अनेक स्थानों पर गुरुकुल कालेज, स्त्री शिक्षा, वेदाध्ययन का अधिकार, यज्ञ में समान अधिकार तथा पाखण्डों पर वज्र–प्रहार प्रारम्भ हुआ। यही ज्ञान की अग्नि थी जिसकी आंच से भारतवर्ष में ज्ञान की ऊष्मा फैलने लगी।

उद्बुध्यस्व प्रति जागृहिः–

यर्जुवेद में एक मंत्र में ज्ञानाग्नि के प्रतीक परम पिता परमात्मा से एक प्रार्थना है – उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि – अर्थात हे ईश्वर! तुम मुझे जगाओ। हे यजमान! तुम उठो जागो और इस विश्व का कल्याण करने को तत्पर हो जाओ। आज भी विश्व में या भारत में पाखण्डों की कमी नहीं है। एक समाप्त होता है तो नया उत्पन्न हो जाता है। यह तो निरन्तर चलते रहने वाला युद्ध है। जब तक सृष्टि रहेगी देव–दानव युद्ध के समान यह ज्ञान एवं अज्ञान का युद्ध निरन्तर चलता रहेगा। स्वामी दयानन्द का जीवन हमारे लिए गहन अन्धकार में प्रेरणा का एक अजस्त्र स्रोत है। जब भी उनकी जीवनी के सम्बन्ध में हम सिंहावलोकन करते हैं तब–तब हमें उससे नई प्रेरणा एवं ऊर्जा मिलती है। शिवरात्रि का यह पावन दिवस हमें इसी ऊर्जा एवं प्रेरणा को प्रदान करने वाला काल है।

आज जब कभी आर्य पत्र–पत्रिकाओं में भी किसी प्रच्छन्न रूप में मूर्तिपूजा के समर्थक सिद्धान्त से परिपूर्ण लेख पढ़ने में आता है तो अनायास ही भय पैदा होता है कि शिवरात्रि का यह महान् ज्ञान कहीं व्यर्थ न हो जाय। आर्य पत्र–पत्रिकाओं के सम्पादकों की सिद्धान्तहीनता या उनके सिद्धान्तों से अज्ञानता का बोध भी हमें तभी पता चल पाता है। मूर्ति पूजा को वेद विरूद्ध घोषित करने वाले तथा किसी भी प्रतीक उपासना के खण्डन करने में अपना सम्पूर्ण जीवन लगा देने वाले यदि स्वामी दयानन्द के सत्ज्ञान के प्रचार को हम गति नहीं दे सकेंगे तो हमारे लिए शिवरात्रि का यह पावन दिवस व्यर्थ चला जाएगा।

आइए इसकी महत्ता को समझें तथा ज्ञान पर्व की इस दीपशिखा को सदैव प्रज्वलित रखने में अपना योगदान करें जिससे कि तमस् से निकलकर उत्कृष्ट प्रकाश की ओर बढ़ सकें–

उद् वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।

दिनांक 28 फरवरी से 1 मार्च 2015 तक आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तराखण्ड द्वारा बागेश्वर, उत्तराखण्ड में आर्य महासम्मेलन आयोजित किया जा रहा है। आपसे अनुरोध है कि कार्यक्रम में अपने परिवारजनों एवं इष्टमित्रों सहित पधारकर आर्य महासम्मेलन की शोभा बढ़ायें। बागेश्वर में आयोजकों की ओर से भोजन एवं आवास की निःशुल्क उचित व्यवस्था की गई है।

निवेदक :

श्री दिनेश कुमार आर्य, मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तराखण्ड मो. 9690907252

ऋषि दयानन्द का विद्याध्ययन : चार सोपान

—डा. भवानीलाल भारतीय

1. दण्डी विरजानन्द के द्वार परः—

नर्मदा के तटवर्ती प्रदेश में भ्रमण करते हुए उन्हें पता चला कि वे जिन सत्य शास्त्रों का ज्ञान उपार्जित करने की इच्छा रखते हैं वे तभी पूर्ण होगी जब वे मथुरा में आर्ष व्याकरण तथा अन्य ऋषिकृत ग्रंथों का अध्ययन कराने वाले एक प्रज्ञाचक्षु सन्यासी विरजानन्द की पाठशाला में अन्तेवासी के रूप में प्रवेश प्राप्त कर लेंगे। अन्ततः दयानन्द को विद्या और ज्ञान के उस स्रोत का पता चल गया जहां जाने से वे अपनी विद्या पिपासा को शान्त कर सकेंगे। वे 1860 ई0 में मथुरा पहुंचे और छत्ता बाजार स्थित दण्डी जी की पाठशाला का दरवाजा खटखटाया। गुरू के पूछने पर उन्होंने अपना परिचय दयानन्द सरस्वती सन्यासी के रूप में दिया। दण्डी ने उनसे कहा कि पहले वे अपने निवास तथा भोजन की स्थायी व्यवस्था कर लें क्योंकि सन्यासी के निवास तथा भोजन की व्यवस्था न होने पर वह अन्यत्र चला जाता है और उसके अध्ययन में व्यवधान पड़ जाता है। तदनुकूल स्वामी दयानन्द ने विश्रामघाट मार्ग पर स्थित लक्ष्मीनारायण मन्दिर की एक छोटी कोठरी को अपना निवास बनाया। जोशी बाबा अमरलाल ने स्वामी जी को भोजन की समस्या से यह कह कर उबार लिया कि वे प्रतिदिन उनके निवास पर आकर भोजन कर लिया करें। दण्डी विरजानन्द की आस्था संस्कृत व्याकरण के आधारभूति पाणिनीय अष्टाध्यायी तथा पंतजलि कृत महाभाष्य ग्रंथों में थी। अब तक जो ग्रंथ पढ़े थे वे ऋषिकृत नहीं थे। दण्डी जी के आदेशानुसार उन्होंने इन अनार्ष ग्रंथों को यमुना में प्रवाहित कर दिया। जो ग्रंथ क्लिष्ट हों, जिनमें सृष्टि के नियमों के प्रतिकूल लिखा हो तथा जो युक्ति और तर्क की कसौटी पर खरे न उतरें, उन्हें त्यागना ही श्रेयस्कर था।

2. दयानन्द की गुरू भक्तिः—

यों तो दण्डी स्वामी विरजानन्द की पाठशाला में अनेक विद्यार्थी पढ़ते थे किन्तु दयानन्द उनमें अपना विशिष्ट व्यक्तित्व रखते थे। वे अपने अध्ययन को समाप्त कर जनसमाज में प्रचलित अंधविश्वासों, रूढ़िवाद तथा मूढ़ धारणाओं को दूर करने के लिए कृत संकल्प थे। मथुरा की पाठशाला में दण्डी के सान्निध्य में स्वामी दयानन्द ने व्याकरण के जिन दो महत्वपूर्ण ग्रंथों का अध्ययन किया, वे थे – अष्टाध्यायी तथा महाभाष्य। इसके अतिरिक्त वेदार्थ की कुंजी के रूप में लिखे गये यास्क रचित निरुक्त तथा वेदान्तदर्शन भी उनके पाठ्यक्रम में थे। यद्यपि दण्डी विरजानन्द अपने शिष्यों के प्रति वात्सलभाव रखते थे किन्तु वयोवृद्ध तथा चक्षुरहित होने के कारण उन्हें क्रोधित होते हुए भी यदाकदा देखा जाता था। स्वामी दयानन्द अपने गुरु की सेवा में सदा तत्पर रहते थे, उनके स्नान के लिए यमुना से ताजा जल लाना तथा पढ़ाई की जगह स्वच्छ रखना उनके ही जिम्मे था। इन कामों को दयानन्द तत्परतापूर्वक करते थे। एक दिन उन्होंने आंगन के कूड़े कर्कट को एक स्थान पर एकत्र तो कर दिया किन्तु उसे हटाने में देर हो गई। अचानक दण्डी जी उधर आ गये और उनका पांव कूड़े पर पड़ा। वे अत्यन्त क्रोधित हुए और छड़ी ले कर स्वामी जी को मारने के लिए

हमारे उपदेश आज, विरेचक औषध की भांति घबराहट अवश्य लाते हैं, परन्तु हैं वे जातीय शरीर के संशोधक और आरोग्य प्रद। वर्तमान आर्य सन्तान चाहे जो हमें कहें, परन्तु भारत की भावी सन्तति हमारे धर्म सुधार को और हमारे जातीय संस्कार को अवश्यमेव महत्व की दृष्टि से देखेगी।

तैयार हुए। स्वामी जी ने गुरु के आक्रोश का तनिक भी बुरा नहीं माना और दण्डी जी के चरण छू कर इतना ही कहा कि महाराज, मेरा शरीर तो व्रजवत कठोर है, किन्तु आपके हाथ कोमल हैं। दण्ड प्रहार से यदि आपको कष्ट हुआ तो वह मेरे दुःख का कारण होगा।

3. दयानन्द दण्डी जी की आशा का केन्द्रः—

स्वामी (दण्डी) विजरानन्द न केवल आर्ष ग्रंथों के निष्णात पंडित एवं व्याख्याकार थे, वे एक क्रान्तदर्शी ऋषि भी थे। उनके नेत्र यद्यपि ज्योतिहीन थे किन्तु उनकी अन्तस्थ प्रज्ञा ने उन्हें भविष्यद्रष्टा ऋषि बना दिया था। वे उस दिन को देखने के लिए उत्सुक थे, जब समस्त भारत में आर्ष ग्रंथों का ही अध्ययन अध्यापन होगा, वैदिक आदर्श जनता में प्रचलित होंगे, धर्म और उपासना के क्षेत्र में व्याप्त संकीर्ण साम्प्रदायिकता समाप्त होगी और देशवासी एक अद्वितीय, निराकार परमात्मा के उपासक बन कर सच्चे आस्तिक कहलाएंगे। वैष्णव मत के केन्द्र मथुरा में रहने के कारण दण्डी जी इस सम्प्रदाय में व्याप्त विकृतियों से भली-भांति अवगत थे। भागवत पुराण के प्रति उनकी तीव्र विरक्ति थी क्योंकि वे मानते थे कि भक्ति के नाम पर वासनाजन्य श्रंगारिकता को फैलाने में इस ग्रंथ का बड़ा हाथ है। दयानन्द के रूप में दण्डी जी को एक ऐसा मेधावी, प्रज्ञावान तथा क्रांन्तिकारी शिष्य मिला था जो आगे चलकर अपने गुरू के स्वप्नों और आदर्शों को पूरा करने में अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा सकेगा। दण्डी जी स्वामी दयानन्द की तर्क प्रवीणता, शास्त्रार्थ कौशल तथा प्रत्युत्पन्नमति के प्रशंसक थे तथा शिष्य मंडली में उसकी प्रशंसा करते नहीं थकते थे। उन्होंने अपने इस प्रिय शिष्य को 'कालजिह्व' तथा 'कुलक्कर' के नाम दिये। कालजिह्व वह तेजस्वी पुरूष होता है जो पाखंडों, अनाचारों तथा मिथ्या धारणाओं के विरूद्ध बोलने में अपनी वाणी को अग्नितुल्य प्रचण्ड बना लेता है। कुलक्कर वह है जो अपने सत्य पक्ष पर खूंटे की तरह अविचलित रहता है तथा प्रतिपक्ष को पराजित करके ही दम लेता है।

4. गुरु दक्षिणा और गुरुकुल से विदाः—

जब दयानन्द का अध्ययन समाप्त हो गया तो गुरू चरणों से विदा होकर विस्तृत संसार को अपना कर्मक्षेत्र बनाने की घड़ी सन्निकट आई। आज दण्डी जी की पाठशाला में अन्तेवासी गुरुचरणों में अर्पित करने के लिए विभिन्न भेंट ले कर उपस्थित हो रहे हैं। दयानन्द पशोपेश में पड़े हैं वे तो सर्वथा अकिंचन हैं। सर्वसंग परित्यागी दयानन्द गुरु के चरणों में क्या अर्पित करें, वह खुद उनको ही समझ में नहीं आ रहा है। दण्डी की यह पाठशाला परिव्राट विरजानन्द जैसे राजर्षि का दरबार ही था, में एक स्वर्णकार नैनसुख जड़िया प्रायः आया करते थे। स्वामी दयानन्द से उनका सौहार्द भाव तथा मैत्री थी। जड़िया जी ने स्वामी जी को परामर्श दिया कि दण्डी जी प्रायः लौंग चबाते रहते हैं। मुख शुद्धि के लिए लौंग चबाना उनका प्रिय कार्य है। अतः क्यों नहीं दयानन्द उन्हें लौगें ही भेंट रूप में अर्पित करें। स्वामी जी को यह प्रस्ताव रूचिकर लगा और वे स्वल्प लौंगे लेकर गुरू सेवा में उपस्थित हुए। अपनी अकिंचनता का उल्लेख कर अत्यन्त विनम्र भाव से लौंगों को श्रीचरणों में समर्पित कर दिया। किन्तु विरजानन्द तो अपने शिष्य से कुछ और ही आशाएं लगाये थे। अतः उन्होंने आदेश के स्वर में कहा, दयानन्द आज सारा भारत देश अवैदिक, अनार्ष और कपोल कल्पित आस्थाओं के जाल में फंस कर दीन हीन और पराधीन हो चुका है। मेरी आकांक्षा है कि तुम वैदिक ज्ञान के सूर्य को पुनः प्रकाशित करो तथा साम्प्रदायिकता के घटाटोप में छिपे वैदिक सूर्य को प्रकाशित करने में अपना सम्पूर्ण पुरूषार्थ लगा दो। स्वामी दयानन्द ने 'तथास्तु' कह कर गुरू चरणों में पुनः प्रणाम निवेदन किया और मथुरा से विदा ली।

महर्षि दयानन्द द्वारा उद्घाटित अन्तर्यामी शिक्षा को पहचानो

—ओम प्रकाश आर्य, राजस्थान

परमात्मा सर्वान्तर्यामी है।

वेद में त्रैतवाद का उल्लेख है। त्रैतवाद से तात्पर्य है – ईश्वर, जीव और प्रकृति का अलग–अलग अस्तित्व है। इन तीनों के सहारे सृष्टि का क्रम चल रहा है। ऋग्वेद में स्पष्ट संकेत हैं –

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं
परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्लस्वाद्वत्यनश्नन्यो
अभिचाकशीति।।

अर्थात आत्मा और परमात्मा रूपी पक्षी प्रकृति रूपी वृक्ष पर बैठे हुए हैं। आत्मा रूपी पक्षी उस वृक्ष के फल का स्वाद ले रहा है और परमात्मा रूपी पक्षी उसे देख रहा है। यह केवल साक्षीमात्र है।

इस मंत्र से यह स्पष्ट है कि ईश्वर, जीव और प्रकृति तीनों की सत्ता अलग–अलग है। आत्मा परमात्मा का अंश नहीं, अपितु अनादि और शाश्वत सत्ता है।

आत्मा परमात्मा दोनों मित्र हैं। आत्मा कर्म करने में स्वतंत्र है, परन्तु उसका फल देना परमात्मा के अधीन है। यदि आत्मा अपने मित्र परमात्मा की शिक्षा को मान लेता है तो उसे आनन्द की प्राप्ति होती है, इसके विपरीत यदि वह अपने मित्र का कहना नहीं मानता है तो उसे अशुभ कर्मों का फल भोगना पड़ता है। वेद उसकी शिक्षा का महानतम भंडार है। शरीर प्रकृति के सूक्ष्म तत्त्वों (परमाणुओं) से बना है जो स्थूल है। इस शरीर के अन्दर सूक्ष्म शरीर है जिसे सांख्य दर्शन में लिंग देह कहा गया है –''सप्तदशैकं लिंगम्'' अर्थात सत्रह का एक लिंग देह होता है। वे तत्व हैं – पंचतन्मात्रा, दस इन्द्रियां, मन व बुद्धि। आत्मा के साथ लिंग देह लगा रहता है। स्थूल शरीर तो द्रष्टव्य है, किन्तु लिंग देह सूक्ष्म है। इसी सूक्ष्म शरीर में शुभाशुभ कर्मों के संस्कार संचित रहते हैं जो जन्म– जन्मान्तर तक चलते हैं। आत्मा उसे ढोता है। जिस चीज को हम एक बार देख लेते हैं वह हमारी सूक्ष्म आंखों के सामने बार–बार आती है। इस प्रकार न देखते हुए भी हम सूक्ष्म आंखों द्वारा देखते हैं, न चलते हुए भी हम सूक्ष्म पैरों द्वारा चलते हैं, न बोलते हुए भी हम सूक्ष्म वाणी द्वारा बोलते हैं, न सुनते हुए भी हम सूक्ष्म कानों द्वारा सुनते हैं। यह सब सूक्ष्म शरीर का कार्य व्यापार है।

परमात्मा जो अति सूक्ष्म है अपनी सूक्ष्म वाणी द्वारा हमें शिक्षा देता है, पर उसकी आवाज इतनी सूक्ष्म होती है कि हम उसे चिन्तन द्वारा ही पहचान सकते हैं। उदाहरणस्वरूप एक व्यक्ति जब कोई गलत कार्य करने जाता है तो परमात्मा उसको वैसा करने से मना करता है, किन्तु स्वार्थ, लोभ, क्रोध, मोह, अहंकार आदि के द्वारा जब वह उसकी आवाज को दबा देता है तब अनुचित कार्य कर डालता है जिसका दुष्परिणाम उसे भोगना पड़ता है।

जो व्यक्ति परमात्मा की शिक्षा को जानता है और उसकी आवाज को सुनता है,

मैंने कोई नया पन्थ चला कर गुरुगद्दी का मठ नहीं बनवाया है।
मैं तो लोगों को मतवादियों के मठों सें स्वतन्त्र करना चाहता हूँ।
ऐसी पदवियों से अन्त में हानियां ही हुआ करती हैं।

वह कभी गलत कार्य नहीं करता। आपने कइयों के मुख से सुना होगा कि वे गलत कार्य करने जा रहे थे, किन्तु उनके हाथ रूक गए। उस गलत कार्य को करने से रोकने वाली परमात्मा की शिक्षा है। जो व्यक्ति परमात्मा की शिक्षा को दबा देता है या उसकी आवाज को नहीं सुनता है वह गलत कार्य करने में संकोच नहीं करता। उसके लिए परमात्मा की शिक्षा मूक बन जाती है।

आपने अनेक व्यक्तियों के मुख से सुना होगा कि फलां काम करने के लिए उनका दिल गंवारा नहीं कर रहा है। यह गंवारा न कराने वाला कौन है? परमात्मा की शिक्षा है। परमात्मा कभी नहीं चाहता कि मनुष्य कोई गलत काम करे। उसकी शिक्षा को न सुनने वाले आत्म हन्ता हैं।

परमात्मा कदम–कदम पर शिक्षा देता है और कण–कण में उसकी शिक्षा समाहित है, ज्ञानपूर्वक उसे देखने की आवश्यकता है। सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, फूल, फल वायु, वनस्पतियों आदि एक–एक चीज उस परमात्मा की शिक्षा को अभिव्यक्ति प्रदान कर रहे हैं। हमें उस शिक्षा पर विचार करना चाहिए। कठोपनिषद् कहता है –

आत्मनं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।

अर्थात् '' आत्मा रथी है, अर्थात् रथ का मालिक है, शरीर रथ है, बुद्धि सारथी है, मन लगाम है।''

इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।
आत्मेन्द्रियमनोयुक्त भोक्तेव्याहुमनीषिणः।।

''इन्द्रियां घोड़े हैं, इन्द्रियों के विषय वे मार्ग हैं जिन पर इन्द्रिय रूपी घोड़े दौड़ते हैं। मनीषी लोग कहते हैं कि जब आत्मा, इन्द्रियां तथा मन मिलकर कोई काम करते हैं तब मनुष्य 'भोक्ता' कहलाता है।

यदि रथ में बैठा हुआ सवार सारथी से यह कह दे कि हम तो रथ को इसी रास्ते से ले चलेंगे, तुम्हें चलना हो तो चलो, अन्यथा उतर जाओ, हमारी जहां इच्छा होगी, रथ वहां–वहां ले जाऊंगा तो उस सवार का क्या हाल होगा? या तो वह गिर पड़ेगा या तो गलत राह पर चला जाएगा, क्योंकि उसकी आवाज को सारथी ने नहीं सुना। ठीक यही हाल है हमारे शरीर रूपी रथ का और उसके लिए परमात्मा की शिक्षा का।

परमात्मा की शिक्षा को सुनो और शरीर रूपी रथ को श्रेष्ठ मार्ग पर ले जाओ, अन्यथा दुःख भोगना पड़ेगा। स्वामी दयानन्द के शब्दों में – ''जो कोई इस शिक्षा के अनुकूल वर्तता है वही मुक्तिजनय सुखों को प्राप्त करता है और जो विपरीत वर्त्तता है वह बन्धजन्य दुःख भोगता है। जो मनुष्य परमात्मा की शिक्षा को सुनता है, उसे आनन्द, उत्साह और निर्भयता, और जो नहीं सुनता है उसे भय, शंका और लज्जा होती है। स्वामी दयानन्द के शब्दों में – ''जब इन्द्रियां अर्थों में मन इन्द्रियों और आत्मा के साथ संयुक्त होकर प्राणों को प्रेरणा करके अच्छे या बुरे कर्मों में लगाता है तभी वह बहिर्मुख हो जाता है। उसी समय भीतर से आनन्द, उत्साह, निर्भयता और बुरे कर्मों में भय, शंका, लज्जा उत्पन्न होती है। वह अन्तर्यामी परमात्मा की शिक्षा है।''

इस प्रकार समस्त सत्कर्म परमात्मा की शिक्षा के अनुकूल और समस्त दुष्कर्म प्रतिकूल हैं। सत्कर्म से आनन्द और दुष्कर्म से दुःख की प्राप्ति होती है। अतः हमें उस अन्तर्यामी परमात्मा की शिक्षा पर विचार करके तदनुकूल आचरण करना चाहिए।

परोपकार और परहित करते समय अपना मान–अपमान और पराई निन्दा का त्याग करना ही पड़ता है। इसके बिना सुधार नहीं हो सकता।

परमपूज्य महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की महिमा

सुन्दरलाल प्रह्लाद चौधरी, बुरहानपुर, म.प्र.

प – परम पूजा के योग्य, आपकी छवि थी धरा पर संत सम्राट समान।
र – रवि शशि रहेंगे गगन में, तब तलक आपकी सदा अमर रहेगी शान।।
म – मन-तन-धन सबका दिव्य बनाने वाले, आपने वेदों का किया प्रचार।
पू – पूर्ण अखण्ड एक परमात्मा ओ३म् को माना सब जीवों का आधार।।
ज् – जड़–चेतन को जान, आत्मज्ञान का सार दर्शाया सत्यार्थ प्रकाश में।
य – यम नियम आसान प्रत्याहार, प्राणायाम, समाधि का भाव दिल में।।
म – मनुज को महामानव बनाने हेतु, आर्यसमाज की स्थापना।
ह – हर्षित रहे सब नर नारी मिथ्या पाखंड, जड़ पूजा से दूर रहे भावना।।
र – रग–रग में वैदिक ज्ञान राष्ट्र भक्ति कृण्वन्तोविश्वमार्यम् छाया था।
षि – षिवाय मोक्ष के कुछ नहीं, जन्ममरण आसक्ति का ही पसारा था।।
द – दशों दिशा में आज गूंज रहा है, श्रेष्ठ आर्य संस्कृति का नजारा।
या – याद दिला रहा सबको, स्वामी श्रद्धानन्द और पं. लेखराम का नारा।।
न – नव सृजन हो भावी पीढ़ी का, सबको मिले गुरुवर विरजानंद जैसा।
द – दशों इंद्रियों को वशकर, मनुज देवत्व को पा पाता असली आधार।।
स – सत्य पर अड़ा वही, आर्यसमाज के दस नियमों से पाता श्रृंगार।।
र – रक्त की हर बूंद में समाया था, भारत माँ का उतारना भार।
स – स्वयं को तपा योग अग्नि में रखा, दर्शाया सबको चारों वेदों का सार।।
व – वंशकुटुम्ब समाज राष्ट्र उत्थान में, यज्ञ उपासना और सुसंस्कार।।
ती – तीन ताप को हरते हैं, सुख समृद्धि और शांति देते हैं करतार।।

वैवाहिक विज्ञापन (वर चाहिए)

प्रतिष्ठित वैदिक परिवार की सुन्दर, स्वस्थ, संस्कारी, गृहकार्य में दक्ष ब्राह्मण युवती, जन्म–19 नवम्बर 1983, कद–5'4' वर्ण– गेहूंआ, शिक्षा– एम.ए.बी.एड., निवासी दिल्ली के लिए गुरूकुलीय स्नातक या आर्य समाजी परिवार का दहेजरहित विवाह हेतु वर चाहिए। (निर्दोष, नाममात्र का विवाह हुआ था) सम्पर्क– 09810796203, समयः सायं 5 बजे से रात्रि 9 बजे तक | email : ekomkaar.rpsharma@gmail.com

समाचार

वर्ष 2014 का ''लखोटिया पुरस्कार''

वर्ष 2014 का 1,00,000 रुपये का नकद ''लखोटिया पुरस्कार'' कोलकाता प्रेजीडेन्सी विश्वविद्यालय की उपकुलपति श्रीमती अनुराधा लोहिया को अखिल भारतीय मारवाड़ी सम्मेलन के वार्षिकोत्सव पर कोलकाता में 25.12.2014 को प्रदान किया गया। इस कार्यक्रम में दिल्ली से विशेष रूप से पधारे श्री रामनिवास लखोटिया, उनके ज्येष्ठ पुत्र श्री सुभाष लखोटिया, पुत्र वधू श्रीमती सुशीला लखोटिया और पौत्र श्री सत्यप्रिय लखोटिया उपस्थित थे। ज्ञात रहे कि प्रत्येक वर्ष यह पुरस्कार राजस्थानी भाषा के साहित्यकार अथवा उसके किसी प्रबल हस्ताक्षर को प्रदान किया जाता है।

सत्यार्थ प्रकाश एवं वैदिक संध्या प्रशिक्षण शिविर

14 अप्रैल (मंगलवार) से 22 अप्रैल (बुधवार) 2015 तक

स्थान – वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, नालापानी, देहरादून

विश्वगुरू महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा मानव कल्याण हेतु सत्यार्थ प्रकाश रूपी महान ग्रन्थ की संरचना की गई। महर्षि द्वारा ग्रन्थ के प्रारम्भ में सत्य अर्थ का यथावत् प्रकाशित करने की उद्घोषणा का सम्पूर्ण ग्रन्थ में तर्क एवं प्रमाणों के द्वारा निर्वहन किया जाना इस ग्रन्थ की प्रमाणिकता एवं उपदियता को सिद्ध करता है।

इस ग्रन्थ के साधनोपयोगी आठवें समुल्लास को अध्ययन–अध्यापन द्वारा इस शिविर में विशेष रूप से आत्मसात कराया जायेगा। इसी के साथ वैदिक संध्या के मंत्रों को शुद्ध उच्चारण एवं अर्थपरिज्ञान करने की विधि का भी प्रशिक्षण दिया जायेगा।

1. यह समस्त प्रशिक्षण एवं अध्यापन आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य के सान्निध्य में होगा।
2. यह शिविर पूर्णतया निःशुल्क है। इस ईश्वरीय कार्य में भावनापूर्वक दिया गया स्वैच्छिक सहयोग स्वीकार्य होगा।
3. शिविर में स्थान सीमित होने के कारण भाग लेने के इच्छुक शिविरार्थियों से अनुरोध है कि वह अपना पंजीकरण यथा शीघ्र करा लेंवे।

   पंजीकरण हेतु सम्पर्क करें:–

1. श्री नन्द किशोर अरोड़ा जी, दिल्ली (09310444170) से दिन में 10 बजे से सायं 4 बजे तक, रात्रि 8 से 10
2. श्री तेजपाल सिंह जी, मुजफ्फरनगर (0941406529) से प्रातः 10 बजे से सायं 4 बजे तक
3. श्री बी.के. गर्ग जी (09410315022) से प्रातः 10 बजे से 4 बजे तक सम्पर्क कर सकते हैं।

   आश्रम में ग्रीष्मकाल में अतिथियों का आवागमन अधिक होता है। अतिथि महानुभाव भी स्थान की उपलब्धता के अनुसार कक्षाओं में भाग लेकर लाभ उठा सकेंगे परन्तु कक्षा में आचार्य जी से चर्चा करने एवं प्रश्नोत्तर करने के अधिकारी शिविर में विधिवत भाग लेने वाले प्रतिभागी ही होंगे।

   स्थानीय महानुभावों से भी निवेदन है कि वे यथासंभव अपनी अनुकूलतानुसार अवश्य ही लाभ उठावें। कक्षा विवरण निम्नलिखित प्रकार से है –

कक्षा – 1	प्रातः 10 से 12	सत्यार्थ प्रकाश अध्ययन एवं वैदिक संध्या प्रशिक्षिण
कक्षा – 2	मध्याह्नोत्तर 2.45 से 4.00	सत्यार्थ प्रकाश स्वाध्याय
कक्षा – 3	सायंकालीन	यज्ञोपरान्त यज्ञशाला में सत्यार्थ प्रकाश अध्ययन
कक्षा – 4	सायं 6 से 7	वैदिक संध्या

निवेदक

श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री
अध्यक्ष–09810033799

ई. प्रेम प्रकाश शर्मा
सचिव–9412051586

शुभकामनाओं सहित **वेद मलिक**

7 मन्दाकिनी इन्क्लेव, अलकनन्दा, नई दिल्ली – 110019, दूरभाष : 26274553

De Bono

Saturn Series

CPU Holder

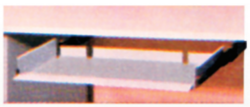

Slide out Keyboard tray

Swivel and Tiltable keyboard tray

Wire Management

All dimensions are subject to change without any prior notice because of continuous research & development. All designs shown here are proprietary: Any infringement is liable for prosecution.

DE BONO FLEXCOM (INDIA) LTD.: Kukreja House, 1st Floor, 46, Rani Jhanshi Road, New Delhi-110055
Ph : 011-23540721. 23533936 **Fax :** 23533944 **Email :** debono@debonoindia.com

ISO:9001
DNV
CERTIFIED

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2015-17 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

MUNJAL SHOWA मुंजाल शोवा

मुंजाल शोवा लिमिटेड देश में टू व्हीलर / फोर व्हीलर उद्योग में सभी प्रमुख ओ.ई.एम. के लिए शॉक एब्जोर्बर, फ्रंट फोर्क्स, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कंवेंशनल) और गैस स्प्रिंगो का सबसे बड़ा निर्माता है। निर्मित उत्पाद, गुणवत्ता और सुरक्षा के कड़े मानों के अनुरूप होते हैं। कम्पनी के उत्पाद बाधामुक्त, आरामदेह, चिरस्थायी, विश्वसनीय और सुरक्षित यात्रा के लिए जाने जाते हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, टीएस–16949, आईएसओ 14001, ओ.एच.एस.ए.एस. 18001 और टीपीएम प्रमाणित कम्पनी है। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

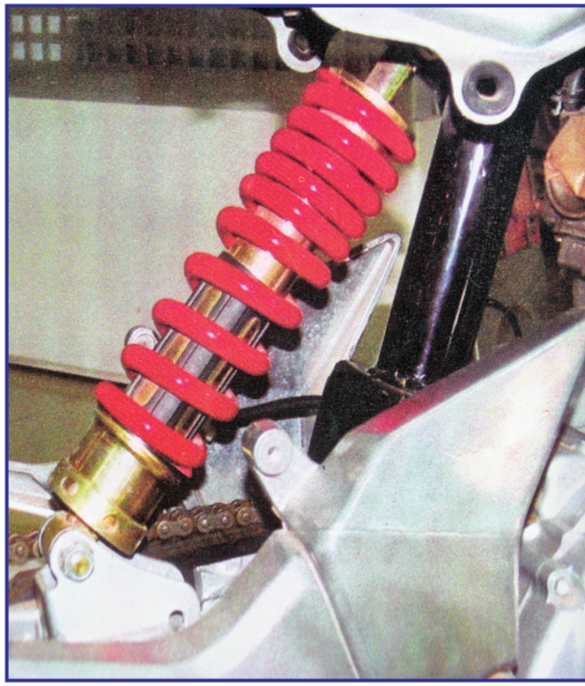

टीपीएम प्रमाणित कम्पनी

आईएसओ / टीएस–16949–2002 प्रमाणित

आईएसओ–14001 एवं ओएचएसएएस–18001 प्रमाणित

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

- हीरो मोटोकोर्प लिमिटेड
- मारुती सुजुकी इन्डिया लिमिटेड
- होन्डा कार्स इन्डिया लिमिटेड
- होन्डा मोटर साइकल एवं स्कूटर इन्डिया (प्र0) लिमिटेड
- इन्डिया यामहा मोटर (प्र0) लिमिटेड

हमारा उत्पादन

- स्ट्रट्स / गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्कस
- गैस स्प्रिंगस / विन्डो बैलेन्सर्स

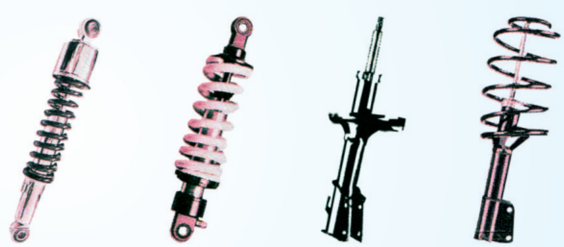

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं0 9–11, मारुति इन्डस्ट्रीअल एरिया, गुड़गाँव। दूरभाषः 0124–2341001, 4783000, 4783100
प्लॉट नं0 26 इ एवं एफ, सेक्टर–3, मानेसर, गुड़गाँव। दूरभाषः 0124–4783000, 4783100
प्लॉट नं0 1, इन्डस्ट्रीअल पार्क–2, सालेमपुर गाँव, मेहदूद–हरिद्वार, उत्तराखण्ड दूरभाषः 0124–4783000, 4783100

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित। संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री